३२२५

श्री यशोविजयजी
जैन ग्रंथमाळा
दादासाहेब, भावनगर.
फोन : ०२७८-२४२५३२२
३००४८५
2018

न्तिम-तीर्थंकर ॥

हिंसा-प्रवर्तक

सर्वज्ञ

भगवान महावीर

॥ संक्षिप्त ॥

लेखक

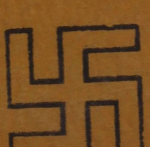

गुलाबचन्द वैद्यमुथा

छिंन्दवाड़ा

म. प्र.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

॥ अन्तिम-तीर्थंकर ॥

अहिंसा-प्रवर्तक

सर्जक

भगवान महावीर

॥ संक्षिप्त ॥

लेखक

गुलाबचन्द वैद्यमुथा

छिन्दवाड़ा

म. प्र.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रकाशक
श्री गुलाबचन्द वैद्यमुथा
छिंदवाड़ा म. प्र.

प्रथम आवृत्ति–१०००
मूल्य १॥)

मुद्रक
देवेन्द्र गोविन्दराम त्रिवेदी
विजय प्रिंटिंग प्रेस
छिंदवाड़ा, म. प्र.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

गुलाबचन्द्र बैदमुथा
इन्कम टैक्स व सेल्स टैक्स
सलाहकार

श्री मैनेजर
श्री यशोविजय ग्रं

श्रीमान
आपके पत्रक नं. २
हम आपको भगवान
पुस्तक अवलोकनार्थ भे
पुस्तक संक्षिप्त में भग
का वर्णन करती है।
पांच सौ तो यहीं खप गा
बेचना है —

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

निवेदन

भगवान महावीरका जीवनचरित्र लिखना कोई सरल काम नहीं है। इस विषयका जितना अध्ययन किया जाता है वह उतना ही गम्भीर और अव्यक्त प्रतीत होता जाता है। भगवान महावीरके जीवनकी सविस्तर घटनाएं व उनके ज्ञानपूर्ण उपदेशोंकी चर्चाएं बहुत ही आकर्षक और आत्मप्रबोधक भिन्न-भिन्न सूत्र और शास्त्रोंमें उपलब्ध हैं, जिनमें कल्पसूत्र, आचारांग सूत्र, आवश्यक सूत्र एवं दिगम्बर आम्नाओंके त्रिलोक सारादि शास्त्र व भगवानके समकालीन बौद्ध शिलालेख मुख्य हैं। यद्यपि भगवान महावीरके जीवनकी ज्ञानयुक्त और युक्तिपूर्ण रचनाएं विरलतासे पाई जाती हैं, पर वे ऐसी विचित्र, भावगर्भित, गहन और विवेकपूर्ण हैं कि उनपर एक-एक उपयोगी विशाल ग्रन्थ की स्वतन्त्र रचना हो सकती है। अगाध ज्ञान भण्डार एवं आत्मकल्याणके अतिरिक्त लौकिक संसार-शांति-स्थापक सामग्री यदि कहीं उपलब्ध है तो वह केवल भगवान महावीरके जीवनसे ही प्राप्त हो सकती है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

खेदका विषय है कि हमारे बहुतसे भाई लोग अज्ञानता-वश भगवान महावीरको श्रीराम भक्त 'हनुमान जी' ही समझ बैठे हैं। यह एक भारी भूल है। भगवान महावीर, जिनका नाम 'वर्द्धमान स्वामी' भी है, अन्तिम अहिंसा प्रवर्त्तक चौबीसवें जैन तीर्थंकर हैं जो आजसे पच्चीस सौ वर्ष पूर्व इस भारतपर्की पवित्र भूमिपर अवतीर्ण हुए थे। इस पुस्तकमें उक्त शास्त्रोंके आधार व मुनि महात्माओं एवं पण्डितोंके सम्पर्कसे जो कुछ प्राप्त हो सका बालोत्साहसे प्रेरित लेखकने अपनी क्षुद्र बुद्धिसे भगवानकी मुख्य-मुख्य लीलाओंका संक्षिप्त तथा यथाशक्ति सरल एवं ग्राह्य वर्णन किया है। उस गहन विषयमें मतभेद, विरोध एवं भूलोंका होना अनिवार्य है। अतः लेखक क्षमाप्रार्थी है और आशा करता है कि विरोधको भूलकर, तथा भूलोंको सुधारकर पठन करके पाठकगण इस पुस्तक द्वारा अपनी आत्माका स्तर भली भांति ऊंचा उठावेंगे।

इस सरल, शांतिदायक संक्षिप्त महावीरके जीवन चरित्र का भारतके घर-घरमें सदुपयोग हो, यही अभिप्राय एवं शुभ कामना है।

छिन्दवाड़ा, म. प्र.
ता. १०-४-१९५१

गुलाबचन्द वैद्यमुथा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कालचक्र

जैन विशेषज्ञों ने इस काल चक्र के दो विभाग किये हैं। एक का नाम उत्सर्पिणी काल और दूसरे का नाम अवसर्पिणी काल है। इन दोनों को मिलाने से कालचक्र होता है। ऐसे अनन्त कालचक्र पूर्व में हो चुके हैं और अनन्ते ही भविष्य में होते चले जावेंगे। इसलिये काल का आदि और अन्त नहीं है ऐसा सर्वज्ञों का कथन है। जब उत्सर्पिणी काल अपनी चरम सीमा तक पहुँच जाता है तब अवसर्पिणी काल का आरंभ होता है। और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जब अवसर्पिणी काल अपनी अन्तिम सीमा तक चला जाता है तब उत्सर्पिणी काल का उदय होने लगता है। इस प्रकार क्रमशः कालचक्र में उन्नति और अवनति हुआ करती है।

जैन धर्म में प्रत्येक सर्पिणी के छै छै विभाग किये हैं। उत्सर्पिणी काल के छै भाग, जिन्हें 'आरे' भी कहते हैं इस प्रकार हैं:—(१) दुःखमा दुःखम् (२) दुःखम् (३) दुखमा सुखम् (४) सुखमा दुःखमा (५) सुखम् और (६) सुखमा सुखम्।

इस काल का स्वभाव है कि यह दुःख की अवस्था में प्रवेश होकर क्रमशः उन्नति करता हुआ सुख की चरम सीमा तक पहुँच कर शेष हो जाता है और पश्चात् अवसर्पिणी काल आरंभ होता है।

अवसर्पिणी कालके छै विभाग (आरे) इस प्रकार हैं:— (१) सुखमा सुखम् (२) सुखम् (३) सुखमा दुःखम् (४) दुःखमा सुखम् (५) दुःखम् (६) दुःखमा दुःखम्।

इस काल का स्वभाव है कि वह सुखकी अवस्था में प्रवेश होकर दुःखकी चरम सीमातक पहुँचकर खतम हो जाता है और बाद में उत्सर्पिणी काल लग जाता है। इस प्रकार यह कालचक्र घूमता रहता है।

जैन शास्त्रानुसार उक्त दोनों कालों में चौवीस चौवीस तीर्थंकर, बारा बारा चक्रवर्ती, नौ नौ बलदेव, नौ नौ वासुदेव अर्थात् नारायण और नौ नौ प्रतिवासुदेव अर्थात प्रतिनारायण होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक सर्पिणी काल में समय समय ६३ महान पुरुषों की उत्पत्ति होती है। इन्हें 'त्रेषठ शलाके पुरुष' कहते हैं। इन

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

महापुरुषोंके चरित्र--श्री हेमचन्द्र सूरिकृति 'त्रेषठ शलाका पुरुष चरित्र' में हैं।

भगवान महावीर जिस सर्पिणी काल में उत्पन्न हुए हैं वह अवसर्पिणी काल कहा जाता है। इस अवसर्पिणी काल में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभ देव जी हुए। उनके बाद २३ तीर्थंकर और हुए हैं जिनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं (२) अजीतनाथजी (३) श्री संभावनाथजी (४) श्री अभिनन्दनजी (५) श्री सुमतिनाथजी (६) पद्मप्रभूजी (७) श्री सुपार्श्वनाथजी (८) श्री चन्द्रप्रभू जी (९) श्री सुविधिनाथजी (१०) श्री शतिलनाथजी (११) श्री श्रेयान्सनाथजी (१२) श्री वासुपूज्यजी (१३) श्री विमलनाथजी (१४) श्री अनन्तनाथजी (१५) श्री धर्मनाथजी (१६) श्री शान्तिनाथजी (१७) श्री कुंथुनाथजी (१८) श्री अमरनाथजी (१९) श्री मल्लिनाथजी (२०) श्री मुनिसुव्रतनाथजी (२१) श्री नमिनाथ जी (२२) श्री नेमिनाथजी (२३) श्री पार्श्वनाथजी और (२४) श्री महावीर स्वामी॥

इस प्रकार तीर्थंकरों की क्रमावली पूर्ण होते हुए काल निर्माण का इतना समय बीत चुका है कि जिसकी गणना प्रत्येक तीर्थंकर की आयुष्य और उनके मध्यकालीन वर्षों की गिनती लगाने से ही प्रतीत हो सकती है। ये गणना जैन शास्त्रों में इतनी बताई गई है कि जिसे संख्यामें तो लिख सकते हैं परन्तु उस संख्या को पढ़ नहीं सकते। इसका कारण यह है कि आधुनिक समय में उतनी संख्या पढ़ने के लिये शब्द ही निर्माण नहीं हुए। इसीसे जैन धर्म की प्राचीनता का पता चलता है कि यह कितना पुराना सनातन धर्म है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्राचीनता

जैन धर्म भारत का प्रचीन धर्म है जो अनादि काल से अविच्छित चला आ रहा है। यह एक स्वतंत्र सर्वज्ञ भाषित धर्म होने के कारण इसके सिद्धान्त बहुत ही उच्च कोटि के हैं। इस धर्म की पवित्र छत्रछाया में किसी भी प्राणी की स्वतंत्रा का अपहरण नहीं हो सकता। प्राणीमात्र को इच्छितवस्तु इसी धर्म से प्राप्त हो सकती है और वह है 'जीना' अर्थात् अपना अपना जीवन। इस धर्म के आश्रय में प्राणीमात्र स्वच्छन्द और निर्भ-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

यता से विचर सकते हैं। विश्वशांति के लिये इसी धर्म ने अहिंसा एवं दया का सुन्दर पाठ संसार को पढ़ाया है। इस धर्म की अहिंसा में ही मानव सभ्यता, विश्वव्यापी सुख और अपूर्व शान्ति की निर्मल धारा बहती है। प्राचीन से प्राचीन ऋषियों के सिद्धान्तों में इस धर्म की छटाओंका स्थान स्थान में उल्लेख पाया जाता है। इसीसे प्रतीत होता है कि यह धर्म बहुत ही प्राचीन और विश्वव्यापी धर्म है। इसकी प्रचीनता के विषय में अनेक प्रमाण मिलते हैं जिनमें से कुछएकका संक्षिप्त उल्लेख यहां किया जाता है।

१. राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द ने अपने 'भूगोल हस्तामलक' में लिखा है कि अढ़ाई हजार वर्ष पहिले दुनिया का अधिक भाग जैन धर्म का उपासक था।

२. ऐतिहासिक प्रमाणों से भी सिद्ध होता है कि वेदकाल के पूर्व भी जैन धर्म का अस्तित्व था। इसीलिये वेदों की ऋचाओं में जैनियों के तीर्थंकरों के नाम आते हैं, जैसे:–

(i) यजुर्वेद (अध्याय २६) 'ॐ रक्ष रक्ष अरिष्ट नेमि स्वाहा' अर्थात, हे अरिष्ट नेमि भगवान हमारी रक्षा करो॥ (नेमि नाथ जिन्हें अरिष्ट नेमि भी कहते हैं जैनियों के २२ वें तीर्थंकर हैं)।

(ii) यजुर्वेद (अध्याय २६) 'ॐ नमोऽर्हन्तो ऋषभों'। अर्थात अर्हन्तनामधारी ऋषभदेव को नमस्कार हो। ऋषभदेव जी जैनियों के प्रथम तीर्थंकर हैं जिन्हें आदिनाथजी भी कहते हैं और अर्हन्त श्री नवकाउमंग का पहला पद है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

३. ऋग्वेद–'ॐ त्रैलोक्य प्रतिष्ठतानां चतुर्विंशति तीर्थंकराणां। ऋषभादि वर्द्धमानान्तानां सिद्धानां शरणं प्रपद्ये ॥'

अर्थ–तीन लोक में प्रतिष्ठित श्री ऋषभदेव से लेकर श्री वर्द्धमान स्वामी तक चौवीस तीर्थंकर हैं उन सिद्धों की शरण प्राप्त होता हूं।

४. ऋग्वेद–'ॐ नग्नं सुधीरं दिग् वाससं ब्रह्मगर्भं सनातनं उपैमि वीरं पुरुषमर्हतादित्य वर्णं तमसः पुरस्तात् स्वाहा'।

अर्थ–नग्न धीर वीर दिगम्बर ब्रह्मस्वरूप सनातन अर्हंत आदित्य वर्ण पुरुष की शरण प्राप्त होता हूं।

ऋग्वेद–अ० २ सू ३३ वर्ग १०–'अर्हन विभर्षि सायकानि धन्वार्हाभिष्कं यजतं विश्वरूपम् अर्हन्नदं दयसे विश्वमम्वं न वा ओ जी–यो रुद्रत्वहस्ति।

भावार्थ–हे अर्हन वस्तु स्वरुप धर्म रूपी वाणी को, उपदेश रूपी धनुषको तथा आत्मचतुष्ठय रूप [अनन्त ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत वीर्य, अनंत सुख] आभूषणों को धारण किये हो। हे अर्जुन आप संसार के सब प्राणियों पर दया करते हो और कामादि को जलाने वाले हो, आपके समान कोई रुद्र नहीं है।

ऋग्वेद–मंडल १ सू-६४ मंडल ५ सू -५२-५ में श्री ऋषभदेव की इस प्रकार स्तुति की गई है:-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

'ऋषभं मा सभासानां, सपत्नानां विषासहितम्, हंतारं शत्रूणां कृधि-विराजं गोपतिंगवाम् ॥'

यजुर्वेद-अ ६ मंत्र २५ में कहा है :-

'स्वास्ति न इन्द्रो वृद्ध श्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः स्वस्ति न स्तोत्यो अरिष्टनेमी स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातुः ।'

इस मंत्र में इन्द्र, पूषा जिन तार्थंकर अरिष्ट नेमि और बृहस्पति से मंगल कामना की गई है इत्यादि ।

५.—महाभारतः—

युगे युगे महापुण्यं दृश्य ते द्वारिकापुरी
अवतीर्णं हरिर्यत्र प्रभास शशि भूषणः ।
रेवताद्रौ जिनो नेमिर्युगादिर्विमलाचले
ऋषीणानाश्रमा देव मुक्ति मार्गस्य कारणम् ॥

अर्थ-युग युग में द्वारकापुरी महाक्षेत्र है जिसमें हरि का अवतार हुआ, जो प्रभास क्षेत्र में चन्द्रमा की तरह शोभित है, गिरनार पर्वत पर [रेवतान्द्रौ] नेमनाथ और सिद्धाचल अर्थात् विमलाचल पर्वत पर आदिनाथ याने ऋषभ देवजी सिद्ध हुए हैं । ये क्षेत्र ऋषियों के आश्रम होने से मुक्ति मार्ग के कारण हैं ।

नोट-इससे मालूम होता है कि महाभारत के पूर्व भी जैन धर्म की मान्यता थी और उनके रेवतादि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अर्थात् गिरनार और विमलाचलादि अर्थात् सिद्धाचल शत्रुंजय पर्वत तीर्थ भी मौजूद थे।

६.—योग वसिष्ठ प्रथम वैराग्य प्रकरणमें— राम कहते हैं—

नाहं रामो न मेवाञ्छा, भावेषु च न मे मनः ।
शान्तिमास्थातुमिच्छामि चात्मन्येव जिनोयथा ॥

अर्थात्—भगवान रामचन्द्रजी कहते हैं कि 'न मैं राम हूँ, न मेरी कुछ इच्छा है और न मेरा मन पदार्थों में है; मैं केवल यही चाहता हूँ कि जिनेश्वर देव की तरह मेरी आत्मा में शांन्ति हो।

७.—मनुस्मृतिः—

कुलादिर्बीजं सर्वेषां प्रथमो विमल वाहनः ।
चक्षुष्मांश्च यशस्वी वाभिचन्द्रो य प्रसेनजित् ॥
मरुदेविच नाभिश्च भरतेः कुल सत्तमः ।
अष्टमो मरूदेव्यां तु नाभेजाति उरु क्रमः ॥
दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुर नमस्कृतः ।
नीति त्रितय कर्ता यो युगादौ प्रथमोजिनः ॥

भावार्थ—सर्व कुलों का आदिकारण पहला विमल वाहन नाम और चक्षुष्मान नाम वाला, यशस्वी अभिचन्द्र और प्रसेनजित मरुदेवी और नाभिनाम वाला, कुलमें वीरोंके मार्गको दिखलाता हुआ, देवता और दैत्यों से नमस्कार पानेवाला, और युगके आदिमें हकार, मकार, धिक्कार ये तीन प्रकार की नीतिका रचनेवाला प्रथम जिन भगवान हुआ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नोट—विमलावाहनादिको जैन शास्त्रोंमें कुलकर कहा गया है। यहां महायुगके आदिमें जो अवतार हुआ है उसे जिन अर्थात् जैन धर्मका आदि देव लिखा है। इसके अतिरिक्त मोहेनजदारोंसे प्राप्त कमसे कम ५००० पांच हजार वर्ष पूर्व की सीलों और सिक्कोंमें पुरातत्ववेत्ता डा० प्राणनाथ विद्यालंकार के कथानानुसार 'नमों जिनेश्वराय' लिखा मिलता है। इससे भी विदित होता है कि युगके आदिमें जिन धर्म विद्यमान था। इसलिये सब धर्मोंमें जैन धर्मही प्राचीन धर्म प्रतीत होता है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जैन धर्म पर जगत् प्रसिद्ध सम्मतियां

१. पंडित राजेन्द्रनाथ (राय प्रपन्नाचार्य) ने अपनी 'भारत मत दर्पण' नामकी पुस्तक के पृष्ठ १० पंक्ती ६ से १५ में लिखा है कि पूज्यपादबाबू कृष्णनाथ बैनरजी ने अपनी 'जैनिज्यम्' नामकी पुस्तकमें बताया है कि भारतमें पहले चालीस करोड़ जैन थे। उसी मतसे निकलकर बहुत लोगोंके अन्य धर्ममें चले जानेसे उसकी संख्या घट गई। यह जैन धर्म बहुत प्राचीन है। इसके नियम बहुत ही उच्च और उत्तम हैं। इस धर्मसे देशको भारी लाभ पहुंचा है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नोट—उक्त कथनमें जैनोंकी संख्या बहुत ही बढ़ी हुई मालूम होती है। परन्तु संभव है कि इतनी बड़ी संख्या भगवान ऋषभ देवजी से लेकर किसी भी तीर्थंकर के मध्यान्ह कालमें इस भूमंडल पर रही हो; क्योंकि जैनियों के प्राचीन से प्राचीन मूल ग्रन्थोंमें इस धर्म के सिवाय अन्य किसी का धर्म उल्लेख ही नहीं पाया जाता, जैसा कि पहले बताये हुए अन्य धर्मोंमें जैन तीर्थंकरों का उल्लेख मिलता है। इसीसे इस धर्म की विशालता और प्राचीनता सिद्ध होती है।

२. महामहोपाध्य पं० गंगानाथ झा एम० ए० डी० एल० एल० इलाहाबाद—'जबसे मैंने शंकराचार्य द्वारा जैन सिद्धान्त का खंडन पढ़ा तब से मुझे विश्वास हुआ कि इस सिद्धान्त में बहुत कुछ रहस्य भरा हुआ है जिसको वेदान्त के आचार्य ने बिलकुल नहीं समझा। जो कुछ अब तक मैं जैन धर्म को जान सका हूं उससे मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि यदि वे (शंकरचार्य) जैन धर्म को और उसके असल ग्रन्थों को देखने का कष्ट उठाते तो उन्हें जैन धर्म से विरोध करने की कोई बात ही न मिलती'।

नोट—उक्त सम्मतिसे यह सिद्ध होता है कि शंकराचार्य द्वारा जैन सिद्धान्त का खंडन कपोलकल्पित और भ्रमात्मक है।

३. महामहोध्याय डाक्टर सतीशचन्द्र विद्याभूषण एम० ए०, पी० एच० डी०, एफ० आई० आर० एस० सिद्धान्त महोदधि प्रिंसिपाल संस्कृत कालेज—कलकत्ता

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आप अपने २७ दिसम्बर सन् १९१३ के काशीमें दिये व्याख्यान में प्रस्तुत करते हैं कि:—

(i) 'जैन धर्म की प्राचीनता का अनुमान लगाना बहुत ही कठिन है। परन्तु इस धर्म के साहित्यने न केवल धार्मिक विभागमें किन्तु आत्मोन्नति के अन्य विभागों में भी आश्चर्यजनक उन्नति प्राप्त की है। न्याय और आध्यात्म विद्याके विभागमें तो इस साहित्यने ऊंचेसे ऊंचे विकास और क्रमको धारण किया है।

(ii) एक गृहस्थ का जीवन जो जैनत्वको लिये हुए है इतना अधिक निर्दोष है कि भारतवर्ष को उसका अभिमान होना चाहिये।

(iii) ऐतिहासिक संसारमें यदि भारत देश संसार भरमें अपनी आध्यात्मिक और दार्शनिक उन्नतिके लिये अद्वितीय है तो इससे किसीको भी इन्कार न होगाकि इसमें जैनियोंको ब्राह्मणों और बौद्धों की अपेक्षा अधिक गौरव प्राप्त है।

४. पं० स्वामीराम मिश्रजी शास्त्री, भूतपूर्व प्रोफेसर संस्कृत कालेज—बनारस

काशीके पौष शुक्ल १ संवत् १९६२ के व्याख्यान में आप दर्शाते हैं कि:—

(i) वैदिकमत और जैनमत सृष्टि की आदि से बराबर अविच्छिन्न चले आये हैं। इन दोनों मतोंके सिद्धान्त एक दूसरे से विशेष घनिष्ट संबंध रखते हैं। अर्थात् सत्कार्यवाद, सत्कारण-वाद, परलोकास्तित्व, आत्माकानिर्विकारत्व मोक्ष का होना और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उसका नित्यत्व, जन्मान्तर के पुण्य पापसे जन्मान्तर में फल भोग, वृतोपवासादि व्यवस्था, प्रायश्चित व्यवस्था, महाजनपूजन, शब्द प्रमाण्य इत्यादि समान हैं।

(ii) आप फरमाते हैं—' सज्जनों इस धर्ममें ज्ञान, वैराग्य, शान्ति, क्षान्ति, अदम्भ, अनीर्षा, अक्रोध, अमत्सर्य, अलोलुपता, शम, दम, अहिंसा और समदृष्टता इत्यादि गुणोंमें एक एक ऐसा है कि वह जहां पाया जाय वहां पर बुद्धिमान लोग उसकी पूजा करने लगते हैं। तबतो जैनोंमें पूर्वोक्त सब गुण निरतिशयसीम होकर विराजमान हैं। यह कायरों का धर्म नहीं है। एक दिन वह था कि जैनाचार्यों की हुंकार से दशों दिशाएं गूंज उठती थी। परन्तु काल चक्र ने जैनमतके महत्वको ढांक दिया है इसीलिये उसके महत्वको जानने वालेभी अब नहीं रहे।

(iii) सज्जनों ! आप जानते हैं कि मैं वैष्णव सम्प्रदायका कट्टर आचार्य हूं तोभी भरी सभा में सत्यके कारण मुझे यह कहना आवश्यक हुआ है कि जैनोंका ग्रन्थ–समुदाय सारस्वत महासागर है। उनकी ग्रन्थ संख्या इतनी अधिक है कि उसकी यदि सूची बनाई तो एक विशाल ग्रन्थ बन जायगा। इनके ग्रन्थ बहुत गंभीर, युक्ति–पूर्ण, भाव–पूरित, विशद और अगाध हैं। यह बात वे ही जान सकते हैं जिन्होंने मेरे समान किञ्चितमात्र इनका मनन किया हो।

(iv) सज्जनों ! जैनमत तबसे प्रचलित हुआ है जबसे संसार सृष्टिका आरंभ हुआ। मुझेतो इस प्रकार कहनेमें भी संदेह नहीं होता कि जैन दर्शन वेदान्तादि दर्शनों से भी पूर्व का है।' इत्यादि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भारत शिरोमणि लोकमान्य पं. बालगंगाधर तिलक

आपके ३० नवम्बर सन् १९०४ के बड़ोदा में दिये हुए व्याख्यानसे अकलंक प्रेस, मुलतान से प्रकाशितः—

१. जैनधर्म और ब्राह्मण धर्म दोनों ही प्राचीन धर्म हैं।

२. जैन धर्म अनादि है यह विषय अब निर्विवाद हो चुका हो और इस विषय में इतिहास के दृढ़ प्रमाण हैं।

३. अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामीका शक चलते चौवीस सौ वर्ष से अधिक हो चुके। शक चलाने की कल्पना जैनियों ने ही उठाई थी। इनसे भी जैन धर्म की प्राचीनता सिद्ध होती है।

४. 'अहिंसा परमोः धर्म' इस उदार सिद्धान्तने ब्राह्मण धर्म पर चिरस्मरणीय छाप मारी है। पूर्व कालमें यज्ञके लिये असंख्य पशु हिंसा होती थी; परन्तु इस घोर हिंसाका ब्राह्मण धर्म से बिदाई ले जाने का श्रेय जैनधर्म हीके हिस्सेमें है। अतः ब्राह्मण धर्म को जैन धर्म हीने अहिंसा धर्म सिखाया। यज्ञोंकी हिंसा जो दोनों धर्मोंके बीच झगड़े की जड़ थी वह अब मिट गई।

५. ब्राह्मण और हिन्दू धर्म में मांस भक्षण और मदिरा पान बंद होगया, यह भी जैन धर्मका ही प्रताप है।

६. जैनधर्म और ब्राह्मण धर्म का बाद में कितना निकट संबंध हुआ है सो ज्योतिषशास्त्री भास्कराचार्य के ग्रन्थसे विशेष

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उपलब्ध होता है। उक्त आचार्यने तो जैनधर्मके रत्नत्रय अर्थात्-दर्शन, ज्ञान और चरित्रको ही धर्मका मूल तत्व बतलाया है।

साहित्य रत्न-डाक्टर रवीन्द्रनाथ टैगोर

पच्चीस वर्ष पूर्व एक सभामें धर्म विषय पर कथन करते हुए आप दर्शाते हैं कि 'महावीर (जैनियों के चौबीसवे तीर्थंकर) ने डीम डीम नादसे ऐसा संदेश फैलाया कि धर्म यह मात्र सामाजिक रूढ़ि नहीं है परन्तु वास्तविक सत्य है। मोक्ष यह बाहरी क्रियाकांड पालनेसे नहीं मिलता परन्तु सत्य धर्म स्वरूपमें आश्रय लेने से मिलता है। धर्म और मनुष्यमें कोई स्थायी भेद नहीं। कहते आश्चर्य होता है कि इस शिक्षाने समाजके हृदयमें जड़कर बैठी हुई दुर्भावनाओं को त्वरा से भेद दिया और सम्पूर्ण देश को पुनः धर्म मार्ग पर अग्रसर करके वशीभूत कर लिया। इसके पश्चात् बहुत समय तक इन क्षत्रीय उपदेशकों के प्रभाव बलसे ब्राह्मणोंकी सत्ता अभिभूत होगई। जैनधर्म में अहिंसा की उत्तम शिक्षा और स्वतंत्र विचार पद्धति धार्मिक क्षेत्रमें अपना विशेष स्थान रखती है' इत्यादि।

मैक्समूलरः—

'जैनधर्म हिन्दूधर्मसे सर्वथा स्वतंत्र है। वह उसकी शाखा या रूपान्तर नहीं है क्योंकि प्राचीन भारतमें किसी धर्मसे कुछ तत्व प्रथक लेकर नूतन धर्म प्रचार करने की प्रथाही नहीं थी। यह धर्म बिलकुल स्वतंत्रतापूर्वक अनादि कालसे प्रचलित है'।

जर्मन डाक्टर जैकोबीः—

'जैन फिलासफीमें बहुतसी आश्चर्यजनक बातें हैं जिसका

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वैज्ञानिक लोगों को पता तक नहीं है मैंने अपने मुल्कमें कुछ लोगोंका ध्यान इस ओर आकर्षित किया है। आज चालीस वर्षोंसे मैं इस फिलासफीका अध्ययन कर रहा हूं।

सरस्वती १२ मार्च सन् १९१३ से उधृत

कनेडियन मिशिन कालेज--इन्दौर के इतिहासवेत्ता प्रोफेसर जोहरी मिशिनरी:—

ईस्वी सन् १९१७–१८ में लेखक जब उक्त कालेज की बी० ए० क्लासमें पढ़ता था तब उसे उक्त प्रोफेसर साहब से बातचीत करनेका कई बार मौका मिला उक्त प्रोफेसर साहब का कथन था कि:—

"स्वार्थियोंके 'न गच्छेज्जिन मन्दिरम्' इस वाक्य ने संसार को सुख और शान्ति पहुंचाने वाले जैनियों के अमूल्य रत्न भंडार ग्रन्थोंको अज्ञानकी चार दीवारोंके अन्दर बन्द कर दिया। यदि जैन धर्मके सिद्धन्तों का प्रचार दुनियां भरमें होता तो संसार के किसीभी भागमें पाशविक अत्याचार और रक्तकी नदियां न बहती जैसाकि अजकल हम यूरोपियन खंडमें सुन रहे हैं। यह धर्म उत्तम आदर्शों का लेकरही अनादिकालसे संसारकी सेवा करता चला आरहा है। यह धर्म कबसे प्रचलित हुआ यह तो इतिहास भी नहीं बता सकता, परन्तु यह अवश्य कहना पड़ता है कि इस धर्मके अनेक उच्च सिद्धान्तोंमे से अहिंसाका सुन्दर सिद्धान्त मनन करने योग्य है।"

श्री महावीर जयन्त्युत्सव समारोह नागपुर — ता० ३०-३-१९४२ अध्यक्ष–नागपुर हायकोर्ट के माननीय जस्टिस

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नियोगीने अपने भाषण में कहाकि 'जैन धर्म मार्टिनल्यूथर के प्रोटेस्टैंट धर्मके अनुसार उठ खड़ा हुआ। वेद और महाभारत में जैन धर्मका उल्लेख है। जैनोंकी संख्याकी न्यूनता कोई महत्व नहीं रखती है, जब तक एकभी जैन जीवित रहेगा, जैन धर्म चलेगा। जैनधर्म पूर्णतया प्रजातन्त्रतावादी धर्म है, जिसमें स्वतंत्रता एकता, प्रेम और सहृदयता का आधिपत्य है। जैनधर्ममें तीन अमूल्य बातें हैं—भक्ति कर्म और ज्ञान जिससे व्यक्तिगत मुक्ति प्राप्त होती है।'

'दैनिक-नवभारत' नागपुर ता० ३ अप्रेल १९४२
'लोकमत' ,, ,, ७ ,, ,,

इस प्रकार इस धर्मकी प्राचीनता, स्वतंत्रता और उत्तम भावनाओंके अनेक प्रमाण इतिहासमें विद्यमान हैं। यह धर्म वैज्ञानिक और स्वतंत्र धर्म होने के कारण सुदृढ़ और सार्वग्राही है। प्रचारकों की कमी और संकीर्णताके कारण इस धर्मका प्रकाश जैसा होना चाहिये था वैसा नहीं होरहा है। इस धर्ममें वीतराग भाव होने के कारण यह न्यायपूर्ण और निष्पक्ष धर्म प्रतीत होता है। इस धर्ममें विशेषकर गुणकी पूजा जाता है। जबतो इस धर्मके प्रसिद्ध जैनाचार्य श्रीमद् भट्टाकलंक देवने नीचे के श्लोक में कैसे मनोहर और निष्पक्ष भावोंसे परमात्मा को नमस्कार किया है—

यो विश्वं वेद वेद्यं जननजलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा।
पूर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम्॥
तं वंदे साधुवंद्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्त दोषद्विषंतम्।
बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थ–जानने योग्य सम्पूर्ण विश्वको जिसने जान लिया, संसार रूपी महासागरकी तरंगे दूसरी पारतक जिसन देखली, जिसके वचन परस्पर अविरुद्ध, अनुपम और निर्दोष हैं, जो सम्पूर्ण गुणों का भंडार और साधुओं द्वारा वन्दनीय है, जिमने राग द्वेषादि अठारह शत्रुरूपी दोषोंको नष्ट करदिया है, और जिसकी शरणमें सैकड़ों लोग आते हैं ऐसा कोई पुरुष विशेष या महान आत्मा है उसे मेरा नमस्कार हो; फिर चाहे वह शिव हो, ब्रह्मा हो, विष्णु हो, बुद्ध हो अथवा वर्द्धमान (महावीर) हो।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगवान महावीर के पहिले

यह तो हम पूर्व ही बता चुके हैं कि यह अवसर्पिणी काल है जिसमें चौबीस तीर्थंकर हुए हैं। उनमें से भगवान महावीरका स्थान अन्तिम तीर्थंकरका है। इनके ढाई सौ वर्ष पूर्व भगवान पार्श्वनाथ स्वामी, तेवीसवें तीर्थंकर हुए है। बस इन्हींके बादका काल भारतके इतिहासमें कालिमासे पुता हुआ है।

भगवान पार्श्वनाथ स्वामी के मोक्ष जाने तक भारत वर्ष में जैन धर्मका भारी उद्योत था। इसी समय में बड़े २ ब्राह्मण इसधर्म के धुरंधर पंडित थे। बड़े २ राजा और महाराजा लोगभी इसी धर्मका पालन करते थे। कर्नल टाड साहेबने अपने राजस्थानीय इतिहासमें लिखा है कि भारतवर्षमें एक समय ऐसा था कि सारे देश में जैन राजा राज्य करते थे और उस समय उनके राज्यों में पूर्ण शान्ति थी। संभव है कि पीछे बतलाई हुई जैन संख्या इसी समय में इतने विशाल रूपमें रही हो।

आगे चलकर टाड साहब पुनः लिखते हैं कि जैन लोग हिमालय से लेकर कन्या कुमारी तक और उससे भी आगे लंका द्वीप तक और कांचीसे लेकर बंगाल, ब्रह्मदेश, स्याम और जावादि देशों तक फैले हुए थे। अनेक देशोंका व्यापार भी इन्हीं लोगोंके अधीन था। प्रत्येक प्रान्तमें उसी समयके बड़े २ जैन

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कार्यालय, विशाल जैन मन्दिर और अनेक आश्रमादि लोकोपयोगी संस्थाएँ इतिहास प्रसिद्ध हैं। अनेक स्थानोंमें आजतक भी उनके पुरातन तीर्थस्थान मौजूद हैं जिनकी शिल्पकारी देखकर उनकी उन्नति और प्राचीन सभ्यताका अनुमान आसानीसे हो सकता है।

भगवान पार्श्वनाथ स्वामीके स्वल्पकाल पश्चात्ही भारत वर्षमें धार्मिक शृंखला टूट चुकी थी और अधर्मका राज्य फैलने लगा था। ब्राह्मण लोग अपने ब्राह्मणत्व को भूलकर स्वार्थके वशीभूतहो अपनी सत्ताका दुरुपयोग करने लगे थे। क्षत्रीलोग भी ब्राह्मणोंके हाथ की कठपुतली बनकर अपने कर्तव्योंसे विमुख होगये थे। समाजमें बहुत ही विकाल विशृंखला उत्पन्न होने लगी थी। समाज और प्रबंध अत्याचारियोंके हाथमें जा पड़ा था। सत्ताउन्माद और अहंकारकी शिकार बन चुकी थी। राजमुकुट अधर्म के शिरपर मंडित था। समाजभर में त्राहि त्राहि मच गई थी। भारत वर्षके धार्मिक और सामाजिक इतिहास में यह काल बड़ाही भीषण था। समाजके अन्तर्गत अत्याचारोंकी भट्टी बारोंसे धधक रहीथी। धर्म के नामपर स्वार्थका राज्य सवार था। धर्म और समाजकी ऐसी दुर्दशा हो चुकी थी कि वे क्षीण क्षीण होकर कई टुकड़ोंमें विभाजित हो चुके थे। जिधर देखो उधरही अधर्म, पाप और हिंसा ही हिंसा दृष्टिगोचर हो रही थी। ऐसी भीभत्स भयंकरता के कारण समाज की उन्नतिके स्थानपर महान अवनति दिखाई दे रही थी। पशुवध और अहिंसामय यज्ञकर्म तो भारतव्याप्त होगया था। कहीं अश्वमेघयज्ञ (जहां सहस्रों घोड़ें अग्निमें होम दिये जाते थे), कहीं गोमेघयज्ञ (जहां गौएं

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जलादी जाती थी), कहीं अजमेघयज्ञ (जहां बकरों की बली दी जाती थी), और कहीं कही तो नरमेघयज्ञ (जहां मनुष्यों तक को भयंकर अग्निज्वालामें भूंज दिया जाता था) भारवर्ष भरमें नित प्रति होने लगे थे। निरपराधी असंख्या प्राणियोंके रुधिर से पृथ्वी सिंचित हो रही थी। सर्वत्र हाहाकार मच रहा था। मूक पशुओं का कोई नाता दृष्टि में नहीं पड़ता था। ऐसी भयंकर भीभत्स अवस्था में सारी सृष्टि एक ऐसे महान् आत्मा की राह देख रही थी जो इन मूक प्राणियोंको नितप्रतिके दारुण दुःखों से मुक्त कर अभीत करे।

इन प्राणियोंकी अभिलाभा पूर्ण हुई। भगवान महावीरने जन्म धारण किया और उक्त सब भयंकर दशाको अपनी बुलंद आवाज द्वारा शान्तकर धार्मिक और सामाजिक सुधारके साथ भारतवर्षमें पुनः शान्तिका साम्राज्य स्थापित किया। अहिंसा अर्थात् अभयदानका पाठ पढ़ाकर प्राणीमात्रको अभीत अर्थात् निर्भय बनाया। प्रभु महावीरका पवित्र चरित्र बुद्धि अगम्य है। पूर्वीय और पश्चात्य इतिहासकारोंने भगवान महावीरके विषयमें बड़े २ ग्रन्थ निर्माणकर मुक्त कंठसे प्रशंसा उच्चारित की है। अतः उन्हीं भगवान महावीरका संक्षिप्त जीवन चरित्र इस पुस्तकका मूल विषय है, जिसे पढ़कर प्रत्येक आत्मा शान्ति लाभ कर सकती है तथा जिसके पठनसे सारा संसार समय समय पर हिंसाकी धधकती ज्वालासे बचकर अपूर्व शान्तिका चिरकाल तक अनुभव कर सकता है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जन्म भूमि और माता त्रिशला के स्वप्न

ईस्वी सन् ५९९ वर्ष पूर्व यह भारतदेश छोटे छोटे राष्ट्रोंमें भिन्न २ नामसे विभाजित था। उस समय बिहार प्रान्तमें वैशाली नामकी नगरी थी। उसके अन्तर्गत क्षत्रीय कुंड नामका ग्राम था। जिला गयामें जहां पर आज लखवाड़ नामका ग्राम बसा हुआ है। वहीं क्षत्रीय कुंड ग्रामकी स्थिति बतलाई जाती है। वही भगवान महावीरकी पुण्य जन्मभूमि है।

यद्यपि यह क्षत्रीय कुंड वैशालीके अन्तर्गत होते हुएभी वह एक स्वतंत्र राजधानी भी था। वहांके राजाका नाम सिद्धार्थ था। राजा सिद्धार्थके आधीन कोई बड़ा राज्य न था फिरभी उनके राज्यकी शिक्षा, वैभव, मान-सन्मान और कला-कुशलता अन्य पड़ौसी राज्योंसे बहुतही बढ़ी चढ़ी थी। राजा सिद्धार्थ की रानी का नाम त्रिशला था। कहीं कहीं रानी त्रिशलाको त्रिशला क्षत्राणी के नामसे भी सम्बोधित किया गया है। इससे भी मालुम होता है कि राजा सिद्धार्थ कोई छोटेसे राज्यके ही क्षत्रीसरदार थे। परन्तु उनका राज्य धन धान्य एवं सुख सम्पतिसे परिपूर्ण था; इसलिये वे अपने समयके गौरववान राजा गिने जाते थे। राजा सिद्धार्थनाथ अर्थात् ज्ञाय या ज्ञात वंशी क्षत्रीय जातिके मुखिया सरदार थे जिनका गोत्र काश्यप था।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

संसार सुख भोगते हुए रानी त्रिशला गर्भवती हुई। प्रसव के दिवस जब निकट आने लगे तब एक दिन रात्रिके समय आधी जगी हुई आधी सोई हुई अवस्था में रानी त्रिशलाने चौदह स्वप्न देखे। किसी किसी जैन आम्नायवालोंका कथन है कि रानी त्रिशला ने सोलह स्वप्न देखे। उन शुभ स्वप्नोंमें से (१) पहले उन्हें एक श्वेत हाथी दिखा (२) दूसरेमें वृषभ उनके साम्हने से निकला (३) तीसरे में एक केशरी (सिंह) देखा (४) चौथे में लक्ष्मी देवी के दर्शन हुए (५) पांचवे में खिले सुगंधित पुष्पों की माला नजर आई (६) छटवें में चन्द्र के दर्शन हुए (७) सातवें में सूर्य दीख पड़ा (८) आठवें में फहराती हुई ध्वजा (९) नवमें में कलश (१०) दशवें में खिले हुए कमलों से भरा हुआ तालाब (११) ग्यारवें में विस्तीर्ण क्षीर सागर अर्थात् दूध का समुद्र (१२) बारवें में देव विमान (१३) तेरवें में रत्नोंका ढेर और (१४) चौदवें में उन्होंने निर्धूम जाज्वल्यमान अग्नि की शिखा देखी। इनमें रत्नजड़ित सिंहासन और धरणेन्द्र का भवन सम्मिलित करने से सोलह स्वप्न हो जाते हैं।

नोट— किसी आम्नाय वालों ने ध्वजा की जगह मछलीके जोड़ेको माना है।

उक्त कथित स्वप्नों को देखकर रानी त्रिशलाकी नींद खुली। वह अपने स्वप्नोंके फलोंका विचार करने लगी। वह सोचने लगी कि इन शुभ स्वप्नोंके देखनेसे ऐसा प्रतीत होता है कि अब शीघ्र ही अत्याचारों का अन्त होगा। हिंसा, घृणा और पापाचार दुनिया से उठकर उनके स्थान में अहिंसा, प्रेम और विश्व-शांति का साम्राज्य स्थापित होगा। इसी प्रकार जो भी रानी त्रिशला ने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अपने स्वप्नों का फल निश्चित कर लिया था तो भी इन स्वप्नों का संदेह उसने राजा सिद्धार्थ को देना उचित समझा।

प्रातः काल होते ही रानी त्रिशला अपने सदन से राजा सिद्धार्थ के शयनागार में गई और राजा को अपने स्वप्नों का पूर्ण वृतान्त कह सुनाया। राजा स्वयं शास्त्रज्ञ था। स्वप्नों का वृतान्त सुनतेही उसने रानी त्रिशलाके समानही स्वप्नोंके फलोंका प्रभाव जान लिया था। फिरभी अति पुलकायमानहो शीघ्रही शौच, मुखमार्जन, व्यायाम, विलेपन और स्नानादि से निवृत होकर, सुन्दर, आभूषण, वसनादिसे सुसज्जित राजा सिद्धार्थ राजसभामें पधारे। फिर उन्होंने स्वप्नशास्त्र विशारद पंडितों को बुलौवा भेजा। राजज्ञा शिरोधार्य पंडितगण भी राजसभामें आये। राजाने भी उन्हें आदरपूर्वक योग्यतानुसार आसन दिये। फिर विनयपूर्वक एकके बाद एक पूर्व कथित स्वप्नोंका उनके सम्मुख वर्णन किया और उनसे इन स्वप्नोंका फल निरूपण करने के लिये कहा।

इस प्रकार राजाका सन्देश सुन स्वप्नशास्त्र विशारदोंका मुखिया बोला कि राजन्। स्वप्नशास्त्रमें स्वप्नोंकी संख्या ७२ प्रकारकी बतलाई गई है। उनमें से ३० स्वप्न बहुतही शुभ फलके देने वाले होते हैं इन्हीं तीसोंमें से १४ या १६ स्वप्न उस रमणी रत्नको दिखते हैं जिसकी गोदसे किसी तीर्थंकर या चक्रवर्तीकी उत्पत्ति होती है। रानी त्रिशलाको तो उक्त सब स्वप्न एकसाथही दृष्टिगोचर हुए हैं। इससे प्रत्यक्षजान पड़ता है कि आपके राज्यमें लक्ष्मी और गौरवको निःसंदेह विस्तार होगा। महारानीके गर्भाधानका समय पूर्ण होनेपर उनकी कोक्षसे एक महान पराक्रमी सर्वगुण सम्पन्न चक्रवर्ती सम्राट अथवा तीर्थंकर का जन्म होगा।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उससे संसारके अत्याचार एवं अनर्थोंका दीर्घकालके लिये अन्तहो जावेगा। ऐसी महान आत्माके आने से संसार भरमें सुख और शान्तिकी वृद्धि होगी। वह भव्य आत्मा जगत् पूज्य होगी और संसारके संतप्त जीवों को कल्याणका मार्ग बतावेगी।

इस प्रकार स्वप्न विशारदोंके वचन सुनकर राजा और रानी हर्षके मारे मनही मन फूल उठे। पश्चात् उन्होंने स्वप्न पाठकों को आनन्द पूर्वक बहु मूल्य भेंट देकर विदा किया। प्रसवके दिन ज्यों ज्यों निकट आने लगे राजा सिद्धार्थके राज्य में धन, धान्य और राजाका सन्मानभी चारों ओर उत्तरोत्तर बढ़ने लगा।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगवान महावीर का

जन्म

卐

स्वप्न पाठकोंके शुभ वचन सुन हर्षायमान रानी त्रिशला अपने गर्भकी भली भांति सम्हाल करने लगी। शास्त्रानुकूल प्रवर्तिमें गर्भाधानकाल सुखपूर्वक बीतने लगा। एक एक दिन गिनते हुए पूरे नौ मास और साढ़े सात दिन बीत चुके। बस उसी समयसे जगत् की अनुचित प्रवृत्तियोंने कुछ पलटा खाया। दशोंदिशाओं में आनन्द और अनुरागकी लहरें उमड़ पड़ी। चारों ओर शीतल

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मंद और सुगंधित वायुका संचार होने लगा। ऋतुराज वसंतने प्रकृतिको सुगंधित और स्वादिष्ट पुष्प एवं फलोंसे आच्छादित कर दिया। जिधर देखो उधर आनन्द और हर्षका साम्राज्य प्रसारित होने लगा। सर्वत्र सुन्दर निमित्त और शुभ शकुन स्वाभाविक प्रवर्तने लगे। ऐसी फूली फली मनोहर आनन्द युक्त बसन्तका वह शुभ दिन ईस्वी सन् ५९९ वर्षके पूर्वका चैत्र मासके शुक्ल पक्षकी तेरसका था जिस समय चन्द्र हस्तोत्तरा नक्षत्रमें था और अन्य ग्रह अनायास उच्च स्थान पर विराजमानथे उस समय रानी त्रिशलाके गर्भसे सिंह लक्षणवाले, स्वर्णके समान कान्तियुक्त, दिव्यरूप राशि पुत्र रत्नका जन्म हुआ।

जिस रात्रिमें भगवानका जन्म हुआ उसी रात्रिमें दैविक गतिसे राजा सिद्धार्थके कोष भंडारादि के धन धान्य, वस्त्राभूषणादि में विपुल वृद्धि हुई। दुःखिया प्राणीगण सहसा सुखका अनुभव करने लगे। चौसठ इन्द्र और असंख्य देवी देवताओंने सुमेरुगिरि पर भगवान का जन्म महोत्सव मनाया। दूसरे दिन राजा सिद्धार्थ ने पुत्र जन्मकी खुशीमें दीन गरीब याचकों को ऐच्छिक दान दिया। जिन मन्दिरों में जगह जगह बहुमूल्य द्रव्यादि से पूजा रचाई; बन्दीखानेसे कैदियोंको छुड़वाया; नगरमें तोल और माप बढ़ाया और नानाप्रकारके महोत्सव करवाये। तीसरे दिन चन्द्रसूर्य दर्शन, छट्टे दिन रात्रि जागरण और ग्यारवें दिन अशुचिकर्म दूर करवाया। बारवें दिन बारसा महोत्सव करके जाति एवं सगे संबंधियों को भोजन वस्त्राभूषण पुष्पमालादिसे सत्कार किया; और पुत्र जन्मके बाद अपने राज्यमें सर्व प्रकार की अनोखी वृद्धि होनेके कारण अपने पुत्र का नाम श्री वर्द्धमान रक्खा। तत्पश्चात

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्रीवर्द्धमान (भगवान महावीर) दूजके चन्द्रमाके समान वृद्धि पाने लगे ।

नोट—दैविक गतिसे धनकी वृद्धि शास्त्रोंमें इस प्रकार बताई गई है कि जब कभी महान आत्माओं का जन्म होता है तब उनकी पूर्व पुन्याईके योगसे देवता लोग अपनी दैविक शक्ति से जमीनमें गड़ा हुआ तथा ऐसा धन, जिसका कोई मालिक न हो, लाकर उनके कोष या भंडार भर देते हैं ।

बाल्यावस्था और बल

भगवान महावीर की बाल्यावस्थाके विषयमें बहुत कम उल्लेख पाये जाते हैं । परन्तु कल्पसूत्रादि ग्रंथोंसे जो कुछभी थोड़े बहुत उपलब्ध हैं उससे भगवानकी बाल्यावस्था पर अच्छा प्रकाश पड़ता है । जब भगवानका जन्म महोत्सव सुमेरू पर्वत पर देवताओंने मनाया था, तथा साढ़े सात वर्षकी अवस्थामें बालक्रीड़ा के समय प्रभुने अपने बलका परिचय दिया था उसीका संक्षिप्त वर्णन हम करते हैं ।

भगवानकी दिव्य कान्ति, तप, तेज, उत्तम प्रतिमा और अगाध शक्ति अलौकिकही थी । पूर्वकथित जन्मोत्सव मनाते समय मेरूगिरि पर जब देवता लोग भगवानको क्षीरोदकसे स्नान करा रहेथे तब इन्द्रको सन्देह हुआ कि भगवानतो इतने छोटेसे हैं, इतने पानीसे स्नान करानेसे कहीं प्रभु बह न जावें । तीन ज्ञानके धारी प्रभुने अपने अवधिज्ञानसे इन्द्रके सन्देहको जान लिया । उसका भ्रम निवारण करने के हेतु भगवानने अपने पांव

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

के अगूंठेसे मेरु पर्वतको किञ्चित् हिला दिया। तबतो एकदम इन्द्रका सन्देह दूर होगया। पश्चात् प्रभुके अतुलनीय बल पर मुग्ध हो, भूरि भूरि प्रसंशा करते हुए इन्द्रने भगवान वर्द्धमान का नाम महावीर रख दिया। तबही से भगवान वर्द्धमान महावीर नामसे प्रसिद्धि पाने लगे।

यों तो भगवान महावीर की बाल्यावस्थाके साहस और वीरता को छोटी-मोटी अनेक कौतुकजनक बातें शास्त्रोंमें उपलब्ध हैं; परन्तु हम यहां उनके बलका एक दूसरा उदाहरण बतलाना चाहते हैं जिससे यहभी शिक्षा मिलती है कि छल कपट वाले शत्रू को प्रहार करके परास्त करने या दंड देनेमें कोई अन्याय या पाप नहीं।

एक समय ग्रामके कुछ बालक अपने बचपनमें बालक्रीड़ा कर रहे थे। उनका खेल इस प्रकार था कि एक लड़का वृक्षपर चढ़ जाता था और दूसरे लड़के उसे छूने के लिये वृक्षपर चढ़ते जो लड़का उसे छू लेता तब वह लड़का उसकी पीठकर चढ़कर नियमित दूरतक जाता और वहां उसे छोड़ आता था। भगवान महावीरकी अवस्था तब साड़ेसात वर्षकी थी तब वे भी इस खेलमें एक दिन सम्मिलित हुए। जिस समय यह खेल हो रहा था उस समय इन्द्र ने अपनी सभामें भगवानके अतुलनीय बलकी प्रसंशाकी। उसपर एक देव बहुत क्रोधित हुआ और प्रभुके बलकी परीक्षा करने के लिये पूर्णवेगसे वह धरातल पर उतर आया उस देवने तुरन्त बालरूप धारण किया और उक्त बालक्रीड़ामें प्रभुके साथ शामिल होगया। खेलते-खेलते योगानुयोग भगवान महावीरको उस देवकी पीठपर चढ़नेकी पारी आई। ज्योंही

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगवान उसकी पीठपर चढ़े त्योंही वह देव भगवानको लेकर पूर्ण वेगसे ताड़के वृक्षके समान ऊपरको उठने लगा। यह कौतुक देख दूसरे बालक भयभीत होकर भागने लगे। तबतो उसे मायावी कोई कपटी शत्रू समझकर महावीरने एक साधारण मुष्टिका प्रहार उस देवकी पीठपर किया। प्रहार होतेही वह देव तुरन्तही नीचे और धरातल पर झुक गया। यह देख बालकगण वर्द्धमान की प्रसंशा करने लगे और उनका भयभी दूर होगया। भगवानकी मुष्टिके प्रहारसे उस देवका गर्व भी चूर-चूर होगया। उसने तुरन्त अपना असली रूप धारण किया और प्रभुके सामने नतमस्तक हुआ। पश्चात् विनय भाव पूर्ण भगवानसे अपनी धृष्टताकी क्षमा याचना करके वह देव पुनः देव लोकको चला गया। यह घटनाभी भगवान वर्द्धमानके महावीर नामधारी होनेका समर्थन करती है भगवानके साहस और बलकी अनेक घटनांएं हैं जिससे उनके अतुलनीय बल और पराक्रमका पता चलता है। पाठक गण अन्यत्र शास्त्रोंमें ऐसी अनेक घटनाओंके विषयमें पढ़ सकते हैं।

नोट-जैन शास्त्रोंमें ऐसी घटनाएं यह सिद्ध करती हैं कि शत्रुको दमन करनेके लिये प्रहारादिसे या ठोक-पीटकर काम लेना कोई अनीति नहीं है।

विद्याध्ययन

जब प्रभु महावीर सात वर्ष के हुए तब उनके माता-पिताने उन्हें अध्यापकोंके पास शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजा। अध्यापक लोग ज्यों-ज्यों उन्हें पढ़ाते, भगवान उनसे भी आगे पढ़ जाते।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जो कुछ अध्यापक उनसे पूछते, उन सब बातोंका उत्तर महावीर अनायासही दे देते। उपाध्याय लोगजो इनको पढाते थे इनकी अद्वितीय तीव्रबुद्धि देखकर अचंभा करने लगते। अध्यापकोंके प्रश्नों के उत्तर जब महावीर सरलतासे देने लगे तो वे लोग पुनः कठिन से कठिन प्रश्न करना आरंभ करने लगे। परन्तु ज्यों-ज्यों कठिन प्रश्न प्रभुके साम्हने आते त्यों-त्यों महावीर अपने सरल स्वभावसे उनका ठीक ठीक उत्तर दे देते। इस प्रकार अतुलनीय तीव्रबुद्धि इस बालककी देखकर अध्यापकों को कुछ दूसराही अभास होने लगा।

एकदिन अध्यापक और उपाध्यायोंने मिलकर प्रभु पर सबसे ऊची कक्षा के प्रश्न करना आरंभ किया। वे प्रश्न इतने कठिन थे कि जिनका उत्तर उपाध्यायभी शीघ्रतासे नहीं दे सकते थे। परन्तु महावीरने तो उन प्रश्नों का उत्तर भी उसी सरलता से प्रथक-प्रथक ठीक-ठीक दे डाला। अबतो अध्यापक और उपाध्यायोंकी आखें खुली और इस बालकके रूपमें उन्होंने किसी महान आत्माको देखा। ऐसे तीव्र बुद्धि बालकको पाकर अध्यापक और उपाध्याय इस सोचमें पड़ गये कि इस बालकको पढाया क्या जाय। यह तो जो कुछभी तर्क-वितर्क युक्त प्रश्न हो उसका उत्तर अनायासही सही सही दे डालता है।

इसप्रकार अध्यापक और उपाध्यायोंको चिन्तित देख इन्द्रने ब्राह्मणका रूप लेकर उस विद्यालयमें प्रवेश किया। उसनेभी अध्यापकों और उपाध्यायों पर महत्व भरे शास्त्रीय प्रश्न किये जिनका उत्तर वे लोग तो न दे सके। परन्तु महावीरने उपाध्यायों की आज्ञासे उन सब प्रश्नोंका उत्तर थोड़ेही देरमें न्याय सङ्गत

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और युक्तियुक्त रूपसे दे डाला। जिसे देखकर, वहां जो लोग उपस्थित थे, वे हर्षयुक्त आश्चर्यावित हो गये। और वह ब्राह्मण भी विचार मग्न होगया। फिर उस ब्राह्मणने निम्नलिखित दस विषयोंके प्रश्न और किये जो बहुतही जटिल और पेचीदा थे। मगर राजकुमारने उन सब प्रश्नों को बात की बातमें युक्तियुक्त सुलझा दिया। वे प्रश्न इन विषयोंसे संबंध रखते थे। (१) संज्ञा सूत्र (२) परिभाषा सूत्र (३) विधि सूत्र (४) नियम सूत्र (५) प्रतिष्ठा सूत्र (६) अधिकार सूत्र (७) अतिदेश सूत्र (८) अनुवाद सूत्र (९) विभाषा सूत्र और (१०) निपात सूत्र।

कहते हैं भावी भगवान महावीर से निकले हुए इन्हीं प्रश्नों के स्पष्टीकरणने आगे चलकर एक वृहत व्याकरणका रूप धारण किया। यही जैनेन्द्र व्याकरण के नामसे प्रचलित हुआ और फिर इसीका अनुकरण जैनाचार्य मुनि शकटायन और पाणिनीने भी किया।

तत्पश्चात् ब्राह्मणरूप इन्द्रने महावीरकी भूरि भूरि प्रसंशा की और कहाकि यह बालक निकट भविष्यमें संसारमें एक बड़ाही विचित्र महापुरुष सिद्ध होगा। प्रखर बुद्धिमत्ता रखते हुए अभिमान रहित इस बालकके लक्षण ऐसे जान पड़ते हैं कि यह अपनी विद्या और बुद्धिसे संयम, सत्य, त्याग और अहिंसा का सुन्दर पाठ संसारको सिखाकर, दुखी जीवों के तापको मिटाकर, शान्तिका राज्य स्थापित करेगा। इतना कहकर ब्राह्मण तो अपने स्थानकी ओर चला गया और उपाध्याय जी राजकुमार महावीरको साथले राजाके पास गये। राजाने उचित सन्मान दे उपाध्यायजी से राजकुमारकी शिक्षाके विषयमें पूछा। उत्तरमें उपाध्यायजी ने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उक्त कथित सम्पूर्ण वृतान्त राजाको आद्यान्त सुनाया। यह सुन राजाभी बहुत अचंभित और हर्षायमान हुये, और उपाध्यायजी को बहुमूल्य पुरस्कार दे पुलकित वदन विदा किया।

युवावस्था

बालकाल और विद्याध्ययन--काल समाप्त करते हुए युवावस्था का भी आगमन हुआ। इस समय भगवान महावीरके जीवनमें दो प्रकारके हेतु उपस्थित हुए। एक तरफ युवावस्था अपना पूर्ण विकास पाकर खिल रही थी तो दूसरी ओर आत्मभाव तेजीके साथ प्रकाशित हो रहे थे। संसारके मोहक पदार्थोंसे आपका मन हट गया था और विरक्त भावनाएं बढ़ रही थी। इस बातका पता आपके माता पिता और कुटुंम्बियोंको भी मालूम पड़ने लगा था। ऐसी अवस्थामें मातापिता पुत्र प्रेमके वशीभूत होकर वर्द्धमानके विवाहका प्रपञ्च रचने लगे।

जैनियोंकी दिगम्बरादि सम्प्रदायें भगवान महावीरको अखंड बालब्रह्मचारी बतलातें हैं। परन्तु श्वेताम्बर आम्नायके कल्पसूत्रादि ग्रन्थोंमें लिखा है कि भगवान की इच्छदान होने पर भी माता पिता की आज्ञा भंग करना अनुचित समझ उन्होंने महाराज समरवीर की कन्या 'यशोदा' के साथ अपना विवाह किया। (प्रकृतिका नियम है कि पूर्व संचित कर्म भोगे विना छूट नहीं सकते; फिरभी ज्ञानियोंके लिये भोगभी कर्म निर्जराका हेतु होता है) तदनुसार भगवान महावीरको कुछ कालतक गृहस्थावास भी करना पड़ा। आपकी एक 'प्रिय दर्शना' नामकी कन्याभी हुई जो राजकुमार जामाली को व्याही गई थी।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इस प्रकार संसार सुख भोगते हुए भगवान महावीर जल-कमलवत् संसारमें गृहस्थावास करते रहे। आपका जीवन एक पवित्र योगीकी तरह व्यतिक्रम होता रहा। परम वैरागी होते हुए भी आपने ३० वर्षकी आयुष्य तक दीक्षा न ली। इसका कारण यह था कि अवधिज्ञानसे आपने, अपने ऊपर माता पिता का अतुलनीय मोह देखकर, यह निश्चय कर लिया था कि जबतक माता पिता जीवित रहेंगे तबतक मैं दीक्षा ग्रहण न करूंगा। एत-दर्थ गृहस्थावासमें भी आपका जीवन दीक्षित साधुकी तरह ममत्व रहित अवस्थामें बीता।

नोट—तीर्थंकर तो गर्भमें आतेही मति, श्रुति और अवधि ये तीन ज्ञानके धारी होते हैं। इसमें अवधिज्ञानसे उसे कहते हैं कि जिसके द्वारा आत्माको अपने तत्कालीन अस्तित्वके समयसे पूर्वका सम्पूर्ण ज्ञान हो।

दीक्षा

" शुद्धातमरस प्रीतरे, कोई बिरला ठाने।
निद्रा मोह कषाय न जामे, पुन्यपाप विपरीतरे॥ कोई॥
जामे कर्म शुभाशुभ नाहिं, बंधमोक्षकी रीतरे॥ कोई॥
दर्शन ज्ञान विकल्प न तामें, शुद्ध चेतना मीतरे॥ कोई॥
स्वामी सेवक भेद जात नश, रहत हार न जीतरे॥ कोई॥
भये न हैं हैं होत सिद्ध नहिं, बिन चेतन परतीतरे॥ कोई॥
प्रीतहोत नश जात भूल चिर, जगसों होत अभीतरे॥ कोई॥"

गो. भ. माला

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

यह बात पहिलेही बतलादी गई है कि पूज्य मातापिताका अपने ऊपर नितान्त मोह देखकर भगवान महावीरने यह निश्चय कर लिया था कि उनके जीते जी संयम (दीक्षा) गृहण न करूंगा। तदनुसार जब भगवानकी अवस्था २८ वर्ष की हुई तब राजा सिद्धार्थ और रानी त्रिसलाका स्वर्गवास होगया। मातापिताके वियोग से उनके परिवार और विशेषतः भगवान महावीरके बड़े भाई नन्दिवर्द्धनको बड़ाही असहनीय दुःख हुआ। संसारकी जन्म मरण परिणतिका अनुमान कर वैरागी प्रभुने अपने बड़े भाई को बहुत सान्त्वना दी, पर उनके हृदयसे पितृ वियोगकी वेदना दूर न हुई। तिसपर प्रभु महावीरने उन्हें पुनः समझाया वे बोले, 'भईया ! संसारमें उत्पाद और व्यय होना स्वाभाविक है। जन्म और मरण का दुःख संसारी जीवोंके साथ अनादिकालसे लगा हुआ है। ज्ञान दृष्टिसे विचार करो और ऐसे उपाय सोचो कि भविष्यमें ऐसे दुःखदाई संबंधही न होने पावे। आत्मिक धर्म क्या है और यह जीव जन्म मरणके दारुण दुःखसे कैसे रहित हो सकता है इसपर विचार कीजिये। संसारकी मोहमायामें आत्मा सदैव शान्ति प्रिय है। अशान्तिके कारणोंमें उलझकर आत्माको दुःखित करना भारी भूल है। मोह--ममताको मनसे हटाइये और संतोषको धारण कीजिये'। इत्यादि भगवानके वचन सुनकर नन्दिवर्धनको संतोष हुआ।

पश्चात् तत्कालीन क्षत्रियगणों ने मिलकर नन्दिवर्धनको पुरातन पृथानुकूल राजतिलक किया। नन्दिवर्धनका राज्याभिषेक होनेके बाद उनसे स्वामीवर्द्धमानने दीक्षा की आज्ञा मांगी। इसपर बड़े भाई नन्दिवर्धन बोले, " भाई हालही में तो हमारे मातापिता का वियोग हुआ है अभीतो हम उसी दुःखसे पीड़ित हैं। उसमें

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जो कुछ संतोष है वह केवल तुम्हारे समीप रहनेसे है। अतः अभी कुछ दिन और ठहरो तथा राजकाज चलानेमें कुछ सहायता करो जिससे परिजनोंमें संतोष और प्रजाजनोंमें सुखका सञ्चार हो प्रभु वर्धमानने अपने पिता तुल्य ज्येष्ट बन्धुकी बात मानकर कुछ कालके लिये गृहवासमें ही साधु जीवन बिताना आरंभ किया। जब एक वर्ष व्यतीत हो चुका तब लोकान्तिकदेवने आकर भगवान से विन्तीकी कि 'प्रभु! संसारमें अज्ञानान्धकार फैल रहा है। जनता आपमें एक महापुरुषकी छवि निहार रही है। लोकमें शान्ति स्थापित करना परम आवश्यक है। इसलिये दीक्षा ग्रहण-कर जगतके दुःखी जीवोंको सुखका मार्ग दर्शाइये-इत्यादि।'

लोकान्तिकदेवके उस प्रकार वचन सुनकर अपने ज्येष्ट बन्धु नन्दिवर्धनकी आज्ञा से भगवानने एक वर्ष तक नित्यप्रति वर्षा-वर्षीय महादान देना आरंभ किया। एक वर्षमें यह दान करोंड़ों मोहरोंका हुआ जिसे पाकर याचकवृन्द भी महान हुए। दान द्वारा इसप्रकार त्याग करना अथवा परिग्रह रहित होना मोक्षमार्ग में संलग्न होनेकी पहली सीढ़ी थी।

पश्चात् भगवान महावीरने नरनेरद्र तथा देवदेवेन्द्र द्वारा रचित महामहोत्सवपूर्वक अगहन बदी दशमीके दिन स्वयं दीक्षा धारणकी। उसी समय भगवानको चौथा मनः पर्यव ज्ञान उत्पन्न हुआ।

नोट—जैन लोग ज्ञानके पांच भेद मानते हैं (१) मतिज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३) अवधिज्ञान (४) मनःपर्यवज्ञान और (५) केवल ज्ञान अर्थात् सर्वज्ञ अवस्था।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भीषण प्रतिज्ञा

॥ क्षमा वीरस्य भूषणम् ॥

भगवान महावीरने जिस दिन दीक्षा ग्रहणकी उसी दिन इस नाशवान शरीर द्वारा पूर्वोपार्जित कर्मों का बदला क्षमताके साथ शान्ति-पूर्वक चुकानेका अटल निश्चय कर लिया। अतुलनीय बल और प्रखर बुद्धि होते हुएभी उन्होंने ऐसी कठिन प्रतिज्ञा करली कि "यदि कोईभी देव दानव मनुष्य एवं तिर्यञ्च कितना ही कष्ट क्यों न दे, वह सब मुझे सम्यक प्रकारसे शान्तिपूर्वक सहन करना होगा।" क्योंकि ऐसा करने से ही दुष्ट कर्मोंका नाश होकर सच्चे सुखकी प्राप्ति होगी। इसप्रकार प्रतिज्ञा करने के बाद भयंकर से भयंकर कष्ट एवं उपसर्ग आने परभी मन, वचन और काया से क्षमापूर्वक शान्तिके साथ उसे सहन करनाही भगवानका एकमात्र ध्येय हो गया। पाठकगण देखेंगे कि अबतो भगवानके पौद्गलिक (जड़) राज्यमें दण्डों का विधान और पापियों से घृणाका अन्त हो गया, और उनकी जगह घोरसे घोर अपराधके लिये इस आत्मशासनमें केवल क्षमा और उसीके द्वारा पश्चाताप करके पापोंके प्रक्षालनका विधान बन गया।

प्राणीमात्र को अपनाअपना जीवन प्रिय है, चाहे वह छोटा हो या बड़ा। इस संसारमें प्रत्येक प्राणी जीना चाहता है। किसी भी जीवको किसी तरहका कष्ट पहुंचाना अधर्म है। सब जीव अपने-अपने जीवनमें जीवित रहनेका समान अधिकार रखते हैं। सबही सुखकी वाञ्छा करते हैं। अतः उन्हें मन, वचन अथवा कायासे दुःखी करना महान पापका कारण है। ऐसी उच्च कोटि की साम्य भवना प्रभुके हृदय में जाग्रत होगई।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पहले प्रभुकी असाधारण विद्या, अलौकिक प्रतिभा और प्रचंड वीरताका उपयोग राजकाज संचालनमें होता था परन्तु अब उन्हीं शक्तियोंका सदुपयोग जगतकी स्थिति, हित और उत्थानमें होगा। संसारकी दसों-दिशाओंमें अब समता उनकी साथिन बनेगी।

जब प्रभुने दीक्षा धारणकी उस समय भगवानके बदनपर इन्द्रने जो वस्त्र रखाथा वह केवल एक वर्ष तक रहा। बादमें भगवान महावीर दिगम्बर अवस्थामें स्वतंत्र विहार करने लगे। परन्तु अपूर्व अतिशयके कारणसे किसीको नग्न नहीं दिखते थे। उनका दृश्यही अलौकिक था।

अब उक्त कथित निश्चय को पूर्णरूपसे पालन करनेके लिये भगवानने द्रव्य और भावसे प्रायः मौनव्रतको ही धारण किया। जब तक प्रभुकी छद्मस्थ अवस्था रही तब तक अनेक प्रकारके कष्ट सहते हुए प्रभुने इसी वृतका पालन किया। यह छद्मस्थ अवस्था लगभग बारह वर्ष पर्यंत रही।

नोट—केवल ज्ञान प्रगट होनेके पूर्वकी अवस्था छद्मस्थ अवस्था कहलाती है। तीर्थंकरोके जीवनमें और दृश्यमें कुछ अलौकिक विशेषताएं होती है जिन्हें उनका अतिशय कहा जाता है।

प्रथम बिहार और उपसर्ग

लक्ष्मी की परवाह न रखते, भले बुरेका ख्याल नहीं।
मृत्यु खड़ी दरवाजे पर हो, तो भी डरका काम नहीं॥
लालच, भयके चक्र जिन्होंपर, चलते निशदिन जहां कहीं।
तो भी न्याय मार्गसे विचलित, होते हैं नर वीर नहीं॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दीक्षाके बाद भगवान महावीरका बारह वर्षका जीवन उग्र तपस्याका जीवन था। इन बारह वर्षोंमें भगवान महावीरको जिन-जिन संकटोंका सामना करना पड़ा उन्हें पढ़कर आत्मा कंपायमान हो जाती है, हृदय विदीर्णसा बन जाता है; धैर्य छूट जाता है और महाविकराल भयंकर क्रूरता का नग्न दृश्य सामने आ जाता है। परन्तु भगवान के उत्कट बल, साहस और अगाध सहनशक्ति के सामने वे सब संकट ऐसे फीके पड़ जाते हैं कि जैसे सूर्यके पूर्ण प्रकाशके सामने चन्द्रका तेज उदास मालूम होने लगता है।

भगवान महावीर को अब अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंका कर्ज चुकाना है। कर्ज चुकाने लिये जिस प्रकार कोई मनुष्य अपने साहूकारों को एकत्रित करता है और वे सब अपना अपना कर्ज वसूल करने को आकर खड़े हो जाते हैं। ठीक उसी प्रकार भगवानभी अप पूर्वोपार्जित कर्मोंका कर्ज चुकाने को अपने पैरों पर खड़े हुए हैं। पाठकगण देखेंगे कि किस प्रकार भगवान इन भयंकर उपसर्गोंका बदला अपूर्व क्षमा, शांति, अहिंसा, सहिष्णुता, त्याग और संयम के साथ चुकाते हैं और उनपर विजय प्राप्त करते हैं। ऐसा अद्वितीय उदाहरण एवं आदर्श संसार में शायदही अन्यत्र मिल सकेगा।

भगवानकी दीक्षा महोत्सवके समय चंदनादि उत्तमोत्तम सुगंधित पदार्थोंका जो लेप हुआ था उसकी सुगन्धसे भौंरे मस्त होकर दशों दिशाओंसे आकर भगवानके शरीर पर बैठने लगे और उसका रसपान करने लगे। यहां तक कि उस सुगन्धिके समाप्त होते तक उन भ्रमरोंने भगवानके शरीरका रक्त और मांस चूसना और नोचना आरंभ कर दिया। उस समयकी वेदना महान

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दुःखदायक और अवर्णनीय थी परन्तु धीर गंभीर भगवानने उसे हंसते हंसते हर्ष एवं शान्ति पूर्वक सहन करली।

दूसरी ओर बनदेवियां भी उसी विलेपन की महकसे उसी स्थान पर पहुंची जहां प्रभु महावीर थे। वे भी प्रभुके लावण्य शरीरमें उठती हुई तरूणाई को और प्रेम भरी चितवनको निहारकर मोहित होगई और उन्हें अपने मोहजालमें फसानेके लिये अनेक प्रकारके लुभाने वाले हाव भाव दिखलाने लगी। परन्तु जिस प्रकार फूलकी पंखुरियां हीरेको बेध नहीं सकती उसी प्रकार बन-देवियांभी प्रभुके पवित्र सुन्दर भावोंपर रंच मात्रभी असर न कर सकी। प्रभु अपने निश्चयमें मेरुपर्वतके समान अटल रहे।

ऐसी अनोखी वैराग्य मुद्राका उन युवतियों पर इतना प्रभाव पड़ा कि वे लज्जित हो अपने सौन्दर्यके प्रति ग्लानि करने लग गई। उनके रूप लावण्य युक्त देहाभिमान चूर-चूर होगया और उसी क्षण उनमें शुभभावनाओंका संचार होने लगा। सच है पारसकी संगतिमें लोहाभी सोना बन जाता है।

इसप्रकार उन शान्तिमुर्ति भगवानने दोनों उपसर्गोंको समभाव से सहन किया। अर्थात् मांस तक काटनेवाले भ्रमरों पर किसी तरहका द्वेष नहीं और मनको लुभानेवाली देवियोंके हावभावपर राग नहीं किया। यही तो भगवान महावीरकी अनुपम सहिष्णुता एवं वीरताका आदर्श नमूना है।

इस तरह मार्गमें उपसर्गोंका सामना करते करते जब दो घड़ी दिन रह गया तब प्रभुने कुमार गांवके निकट एकान्त स्थानमें ठहरनेका निश्चय किया और वहीं जाकर नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमाकर ध्यानमें खड़े हो गये।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नोट—जैन योग शास्त्रमें शुक्ल ध्यान ध्याते समय कायोत्सर्ग (काउसग्ग) करते वक्त दृष्टि को नासिका के अग्रभाग पर केन्द्रित किया जाता है पश्चात् ध्यान मग्न होते हैं।

ग्वालों की क्रूरता

कुमार गांवके एकान्त स्थानमें जब भगवान खड़े खड़े ध्यानमें मग्न थे उस समय एकाएक कुछ ग्वाले अपने बैलोंको चरानेके लिये वहां निकल आये। थोड़ी देरके बाद ग्वालोंको कुछ कामके लिये वहांसे अन्यत्र जाना पड़ा। उन्होंने विचार किया कि यह मुनि यहां खड़ा खड़ा अपने बैलों को देखता रहेगा। इसे जताकर अपन लोग अपना कार्यकर आवें। ऐसा सोचकर उन्होंने प्रभुको जतलाकर बैलोंको वहीं चरते हुए छोड़ दिया और अपने कार्यके लिये चले गये। परन्तु भगवान तो ध्यानस्थ थे। उन्हेंतो किसी भी बातका प्रयोजन न था। कुछ देरके बाद बैल वहांसे चरते चरते इधर-उधर चल दिये। पश्चात् ग्वाले अपना काम करके लौटे और वहां आकर देखा तो उन्हें बैल नहीं दिखे। तबतो उन्होंने बैलों को ढूंढना आरंभ किया। बहुत देर तक ढूढ़नेके बाद जब बैल उन्हें नहीं मिले तो वे क्रोधित हो हताश से हो गये और वहां आये जहां प्रभु महावीर ध्यानमग्न खड़े हुए थे। वहां आकर देखा तो बैल प्रभुके पास ही चर रहे थे। इसपर ग्वालों को बहुत संदेह हुआ। वे सोचने लगे कि हो न हो इसी ध्यानी पुरुषने हमको इतना त्रास दिया। यह चोरभी हो सकता है क्योंकि यदि हम इतनी खोज अथवा जांच पड़ताल न करते तो संभव है कि यह हमारे बैलोंको चुराले जाता। इसलिये इसे मारकूटकर यहांसे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगा देना चाहिये नहीं तो ये कुछ और ऐसे उपद्रव करेगा। ऐसा उपद्रव करेगा। ऐसा विचारकर ग्वालों के पास जो रस्सी थी उससे उन्होंने भगवानको निर्दयता पूर्ण सड़ा-सड़ मारना प्रारंभ कर दिया। परन्तु भगवान अपने ध्यानसे किञ्चित भी विचलित न हुए। ग्वालोंकी भी भीभत्स क्रूरताको भी उन्होंने अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंके फलोंकी अदाईका सस्ता और सरल सौदा समझा।

भगवानके साथ जब यह भीषण कांड हो रहा था तब इन्द्रने अपने अवधिज्ञानसे मालुम किया कि थोड़ाही समय हुआ है। प्रभुने दीक्षा धारणकी है और आज इतना भयंकर उपसर्ग हो रहा है; कुछभी हो इस समय भगवानकी रक्षा करना परम आवश्यक है। ऐसा विचारकर शीघ्रातिशीघ्र इन्द्र उस स्थान पर आया और ग्वालोंको उनके दुर्व्यवहारसे रोका और उन्हें वहांसे भगा दिया। तदनन्तर प्रभुका ध्यान समाप्त हुआ तब इन्द्रने उन्हें विनयपूर्वक नमन कर नम्र भावसे प्रार्थनाकी कि "प्रभु! अभीतो दीक्षाका थोड़ासा समय बीता है, अभी बारा वर्ष और बीतना है। इतने समयमें न मालुम कैसे कैसे भयंकर उपसर्ग आवेंगे। अभीसे शरीर की ऐसी दशा हो रही है इसी शरीर द्वारा तो जगतका कल्याण होने वाला है। अतः आज्ञा दीजिये तो हम सेवक के रूपमें आपके शरीर रक्षक बनकर आपके साथ रह सकें।"

इसपर प्रभुने बड़ेही शान्त और प्रसन्न बदन हो इन्द्रको उत्तर दिया "देवराज! ऐसा कभी हुआ न होगा, कर्मोंका फल तो अवश्यही भोगना पड़ेगा। जो तीर्थंकर होते हैं वे दूसरोंकी सहायता कभी नहीं चाहते। वे अपनी ही प्रतिभासे, अपनी ही आत्माकी अनन्त शक्ति द्वारा समस्त बाधाओं एवं परिसहोंका

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

धैर्य और गंभीरता से सामना करते हैं और शान्तिके साथ उन्हें सहते हैं। वे अपनीही आत्माके विकाश पर कैवल्य ज्ञान प्राप्त करते हैं चाहे उनका यह सौदा कितनाही मंहगा क्यों न हो। शक्रेन्द्र ! इस कथनमें न तो अभिमानका आभास है और न आपकी सहायताकी अवहेलना ही है।"

यह सुनकर इन्द्रने मनहीमन भगवानके रचालम्बनकी प्रसंशा की और इन्हें नमन कर अपने स्थानकी ओर प्रस्थान किया। परन्तु भगवानके इतना कहने परभी स्वस्थानको जाने के पूर्व, इन्द्रने सिद्धार्थ नामक देवको भगवान पर उपसर्गों को रोकनेके लिये वहां रक्षकरूपमें रखदीं दिया। उधर भगवान भी अपने कर्मों की निर्जरा करने लिये पुनः ध्यान मग्न हो गये।

नोट—महान आत्माओं के पुन्य के प्रभाव से इन्द्रादिक देव भी प्रभावित होकर उनकी सेवाके लिये तत्पर हो जाते हैं ऐसा जैन शास्त्रों का कथन है इसमें अतिशयोक्ति नहीं है।

प्रथम चतुर्मास

भगवान महावीरकी छद्मस्थ अवस्थाकी अवधि बारह वर्ष की थी। भगवान पर इन बारह वर्षोंमें भयंकरसे भयंकर उपसर्ग हुए पर हम यहां उनमें से कुछ मुख्य मुख्य उपसर्गोंका संक्षिप्त वर्णन करेंगे।

प्रभु महावीरका प्रथम चतुर्तुमास मोराकसन्निवेशमें हुआ। वर्षा ऋतुके आरंभ होते ही प्रभुने मोराक सन्निवेशमें दुइजन्त नामक एक तापसके आश्रममें अपना निवास आरंभ किया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उस आश्रम का कुलपति प्रभुके पिताका मित्रथा । इस आश्रममें और भी अनेक तपस्वी रहते थे । परन्तु आश्रमके जिस स्थानमें प्रभु ठहरे थे वहां वे सदैव ध्यान मग्न रहकर ही रात दिन बिताते थे यहां तक कि उस स्थानके आसपास इतनी घास ऊग गई थी कि वहां आश्रम की गौएं आकर चरती और उसे तहस नहस करती तोभी ध्यानस्थ प्रभु उसकी कुछभी परवाह न करते । इस तरह वह स्थान दिन बदिन नष्ट होने लगा उसे देख दूसरे इर्षालु तपस्वी कुलपतिसे प्रभुकी शिकायत करने लगे कि न मालूम यह कैसा तपस्वी है कि अपने स्थानके आसपास की परवाह तक भी नहीं करता और न उसे साफ स्वच्छ रखता है । यह बहुत कायर मालूम होता है ऐसा तापस आश्रममें नहीं होना चाहिये; इत्यादि ।

तपस्वियोंके वचन सुनकर कुलपतिभी उनकी बातोंमें आगये और प्रभु जहां पर ध्यान करते थे वहां आकर उन्हें कुछ बातें सुनाईं । परन्तु क्षमाशील प्रभुने कुलपतिकी सब बातें प्रसन्न वदन सुनली और उनके प्रति जराभी रोष न लाया । परन्तु लोक मर्यादा और साधुमार्गमें प्रवृत होने वाले लोगों की रक्षाके लिये उनके मनमें एक विचार उत्पन्न हुआ । इस बिचारके उत्पन्न होतेही प्रभुने उसी समय निम्न लिखित पांच प्रतिज्ञाएं कर वहांसे अन्यत्र चल देनेका निचश्य कर लिया वे पांच प्रतिज्ञाएं इस प्रकार थी ।

(१) अप्रीतिकारक स्थान में कभी न ठहरना.

(२) प्रायः मौनवृत में ही रहना.

(३) कहीं भी रहें कायोत्सर्गही धारण कर रहना.

(४) अंजली ही को पात्र मान उसीमें आहार करना.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

(५) गृहस्थसे विनय न करना अर्थात् दीनवृत्ति न दिखाना।

ऐसी कड़ी प्रतिज्ञाएं कर वर्षा ऋतुके समाप्त होतेही भगवान ने उस आश्रमसे एकदम विहार कर दिया और आस्थिक ग्राममें पधार गये।

इस आस्थिक गांवमें शूलपाणि नामक एक यक्ष रहता था, जो गांवके जीवधारियोंको मारकर खाया करता था और उनकी हड्डियोंके ढेर लगाया करता था; जिससे उस गांवका नाम आस्थिक गांव अर्थात् हड्डियोंका गांव पड़ गया था। गांवके कुछ मनुष्योंने उस यक्षको खुश करनेका प्रयत्न कर रक्खा था जिसके द्वारा उस नरभक्षी यक्षसे उनकी रक्षाहो सके। गांवमें प्रभुने यह बात सुनकर उस यक्षके यक्षालय में ही ठहरने की अपनी अभिलाषा प्रगट की। इसपर लोगोंने प्रभुसे प्रार्थनाकी कि 'स्वामिन् उस यक्षके समीप निवास करना उचित नहीं, क्योंकि उसके पास जाकर प्राण बचाना कठिन है। इसलिये हम लोगोंकी प्रार्थना है कि आप वहां जानेका और ठहरनेका विचार त्याग दीजिये। परन्तु भगवान उस यक्षके भयसे कब भयभीत होने वाले थे।

प्रभु वहांसे चलकर शूलपाणि के यक्षालयमें जा पहुंचे और उसके एक कोनेमें रहनेका विचार कर लिया और ध्यान करने लगे। रात्रिका समय होने लगा, कालिमा चारों ओर छागई; परन्तु मौनवृती प्रभु अपने कायोत्सर्ग ध्यानमें ज्योंके त्योंही अचल खड़े रहे। रात्रिके नियत समय पर वह यक्ष वहां आया। तपस्वी भेषमें प्रभुको अपने यक्षालयमें देख उसके क्रोधकी सीमा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

न रही। उसी समय उसने एक भयंकर गर्जनाकी, जिससे आस पासके पशु पक्षी घबरा गये परन्तु भगवान जराभी चल-विचल न हुए। पश्चात् उसने एक बहुत बड़ा डरावना रूप बनाकर भगवानको भांति-भांतिसे डराना शुरू किया, किन्तु वीर प्रभु पर उसका कुछभी असर न हुआ। तीसरी बार उसने एक विकराल सर्पका रूप धारण किया और जोर-जोरसे फुंफकारता हुआ भगवानको जगह-जगह डसना शुरू कर दिया, पर अटूट आत्मबल और घोर तपोबलके प्रभावसे प्रभुका कुछभी न बिगड़ा बल्कि उनकी मुख मुद्रा पर निर्भयता और आनन्द प्रभा दुगनी झलक उठी।

सिद्धार्थ व्यन्तर देव यह सब हाल देखही रहा था; वह तुरन्त उस यक्षके पास आया और उसे कहने लगा कि 'अरे! अरे! तूने यह क्या किया उपद्रव मचा रक्खा है; तू नहीं जानता कि इन्द्र महाराज भी इन्हें अपना पूज्य मानते हैं और इन्हें नमन करते हैं। तूने इनके मुखचन्द्रसे भी न पहचाना कि ये तो जगत्पूज्य आत्मा हैं। दूसरे तो तेरे डरसे ही दूर भागते हैं पर ये तो खुद आकर तेरे यक्षालय में ठहरे हैं, इसीसे तुझे मालूम करलेना था कि ये अवश्य कोई अपूर्व बलधारी आत्मा हैं। चल चल यहां से दूर हो इत्यादि"

यक्षतो अपनी अनीति और अत्याचारोंका प्रभु पर कुछभी असर न देख मनहीमन कायल हो ही रहा था, तिसपर सिद्धार्थ व्यन्तर देवके कथन से तो उसकी क्रूरता बिलकुलही विलीन हो गई। वह मन ही मन पछताने लगा और प्रभुसे अपने दुष्कृत्योंकी बार बार क्षमायाचना करने पर तत्पर हो गया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आत्मशक्तिने राक्षसी शक्ति पर विजय पाई। वह यक्ष अपने क्रूर कर्मोंकी निन्दा करने लगा। वह प्रभुके चरणोंमें आकर गिर पड़ा और नानाविधि से अपने पूर्व कृत्योंपर पश्चाताप करने लगा। प्रभुके तपोबल एवं आत्मशक्तिने यक्षकी काया पलट करदी। वह उसी समयसे सम्यक्त्वी बन प्रभुकी उपासना में लग गया।

चण्डकौशिक सर्प की सद्गति

भगवान महावीर वाचाल सन्निवेश से बिहार करके ज्योंही श्वेताम्बरी नगरीकी ओर रवाना हुए त्योंही मार्गकी एक भयानक अटवीमें एक ग्वालसे उनकी भेंट हुई। भगवानकी अनुपम शान्ति और गंभीर शारीरिक स्थितिको देख उस ग्वालने पूछा 'प्रभु आप किस ओर पधार रहे हैं ?'

प्रभुने उत्तर दिया—'श्वेताम्बरीकी ओर'। इसपर उस ग्वालने विनय पूर्वक भगवानसे विन्तीकी कि 'स्वामिन्! श्वेताम्बरीका यह मार्ग तो बिलकुल सीधा है परन्तु इस मार्गमें बहुत बड़ा भय है। इसरास्तेमें एक बहुतही भयानक दृष्टिविषवाला 'चंडकौशिक' नामक सर्प रहता है जिसकी दृष्टिमात्रसे मनुष्यतो क्या उससे भी बड़े बड़े विशाल प्राणीभी नहीं ठहर सकते। यदि कोई अकस्मात् वहां जा निकले तो वह शीघ्रही भस्मीभूत हो जाता है। अतः आप कृपाकर दूरके अन्य मार्ग से श्वेताम्बरीको पधारें तो अच्छा हो।

भगवान महावीरतो एक नितान्त निर्भय आत्मा थे। वे इस ग्वाल की भयोत्पादक बातोंसे बिलकुलही विचलित न हुए और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उन्होंने उसी मार्गसे जानेका निश्चय कर लिया। उन्होंने सोचा कि उस सर्पके अन्दर इतनी भारी शक्ति है और वह उसका दुरुपयोग कर रहा है यदि उसे किसी तरह बोध होजावे तो वह उसी शक्ति द्वारा सदुपयोग करके अपना कल्याण भी कर सकता है। क्योंकि शक्तितो आत्माका निजगुण है। जिस शक्तिसे जीव घोर नर्कमें नींव डालता है उसी शक्ति द्वारा वह मोक्षभी प्राप्तकर सकता है। ऐसा विचारकर भगवान उसी सर्प की ओर रवाना हो गये और उसकी बामीपर जाकर ध्यान लगा दिया।

भगवान को ध्यान लगाये जब कुछ समय बीत चुका तब वह सर्प भी अपनी बामीसे बाहर निकला। वहांसे बाहर निकलतेही उसकी दृष्टि ध्यानस्थ प्रभु पर पड़ी। बस उसके क्रोधकी सीमा न रही। वह क्रोधसे ज्वालामय होकर सोचने लगा कि "मेरे इस निर्जन शान्त राज्यमें जहां हिंसक जानवरों तकको प्रवेश करने की हिम्मत नहीं होती वहां इस निर्भीक अचल मनुष्यको खड़े रहनेका साहस कैसे हुआ?" बस, इतना सोचकर उसने ऐसी भयंकर विषभरी फुंफकार छोड़ी कि उस जंगलमें सर्वत्र विषकी चिनगारियां फैल गई और चारों ओर नील वर्णकी आभा छा गई। उससे दूर दूर तक बचेकुचे जीवजन्तु भस्म हो गये। परन्तु भगवान पर उसका कुछ भी असर न पड़ा। तबतो वह क्रोधके मारे और भी आग बबूला हो गया और पूर्ण वेगसे लपककर उसने भगवानके पैरके एक अंगूठेको जोरसे डस लिया। तब भी भगवान पहले के समान ही अटल और ध्रुवकी तरह अचल ध्यान मग्न खड़े के खड़े रहे। उन्हें सर्पकी फुंफकार और काटने का कुछ ध्यान ही

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

न था। तब तो सर्पको बड़ा आश्चर्य हुआ। पहले तो उसे अपने विषप्रयोगका भारी गर्व था, परन्तु भगवानको बिलकुल स्वस्थ और शान्त रूपमें खड़ा हुआ देख उसका सारा गर्व चूर-चूर हो गया। फिर भी उसने अपनी शक्तिकी एक बार और परीक्षा की। उसने अबकी बार लपक-लपककर भगवानके शरीरमें इधर-उधर पूर्ण वेगसे काटकर उन्हें धराशायी करना चाहा। परन्तु आत्मबल के सामने उसे इसबार भी पूर्ववत विफलता ही मिली।

अबतो सर्प टकटकी लगाकर प्रभुके तरफ देखने लगा। इतने कड़े उपसर्गके बादभी उसने प्रभुके मुख मंडल पर शान्ति क्षमा और दयाकी उज्वल ज्योति ही देखी। इस अनोखे दृश्य को देखते ही सर्प तो मुग्धसा बन गया। उसके मनके परिणाम आपसे आप बदलने लगे। उसका अन्तःकरण स्वच्छ और निर्मल होने लगा जैसे जैसे वह भगवानको निहारता वैसे वैसे उसकी विषमयी क्रूरता विलीन और मनके परिणाम शुद्ध होकर उत्तम उत्तम भावनाएं जाग्रत होने लगी। अब सर्प की आत्माने पलटा खाया। बस उसका यही दृष्टिकोण तो भगवानको अपनी आत्मशक्तिसे पलटाना था कि सर्पने आत्मकल्याणकी ओर दृष्टि फेरी।

जब भगवानकी ध्यान मुद्रा खुली तब वे बोले 'रे चण्ड कौशिक! समझ। समझ। तू अपने पूर्व भवको स्मरण कर और इस भवमें की हुई भूलों पर पश्चाताप कर। सोच तू कौन है, कहांसे आया है और क्या कर रहा है? इत्यादि भगवानके शान्ति मय वचन सुनतेही उसे 'जाति स्मरण' ज्ञान उत्पन्न होगया जिसके आधारसे उसे अपने पूर्वभवका स्मरण हो आया। उसने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

देखा कि अहो !!! मोक्षकी साधनाके हेतु बना हुआ पूर्वभवका साधु, मैं क्रोधके कारण कर्म बांधकर 'चण्ड कौशिक' सर्प हुआ हूं। फिरभी इस समय महाक्रोध कर अनेक जीवोंके प्राण हर रहा हूं और त्रास दे रहा हूं। इतनाही नहीं जगत्पूज्य करुणासागर भगवानको भी मैंने निर्दयतासे डसा है। न जाने अब मेरी क्या गति होगी। बस अब तो उसकी शक्तिने पूर्णरूपसे पलटा खाई। सर्प, पहले जितना उग्र क्रोधी था, आजसे उतनाही शान्तताकी मूर्ति बनगया, मानो एक मोक्षाभिलाषी आत्माने वैराग्य मुद्राको धारण कियाहो। सर्पने अनशन करना आरंभ कर दिया और अपने आयुष्य कर्मको पूर्णकर आठवें स्वर्गको प्राप्त किया। पाठक गण ! जिस सर्पको भगवानकी शान्ति मुद्राने आठवें स्वर्गका स्वामी बनाया ! यहीतो प्रभुकी प्रभुता है जहां उत्तम क्षमा, शान्ति, सत्य और अहिंसाका प्रचण्ड प्रभाव मूर्तिमान हो कर दृष्टिगोचर होता है।

नोट—जड़धादी लोग विषैले सर्पके काटने और फिरभी जीवित रहजाने में सहसा विश्वास नहीं कर सकते। परन्तु आज भी देखा जाता है कि मंत्रादि क्रिया के प्रभावसे बड़े बड़े भंयकर सर्प बसमें किये जाते हैं। मंत्रादि शब्द जड़रूप होने परभी इतना प्रभाव रखते हैं तब आत्म शक्तिके प्रभावमें तो अपूर्व बल भरा हुआ है तिसपर महानयोगीके शरीर पर विषका असर न हो यह स्वभाविक अर्थात् अतिशयोक्ति-रहित है। इसपाठमें क्षमा और क्रूरताके युद्धका मनोहर वर्णन और क्षमाकी सुन्दर विजयका दिग्दर्शन कितना शिक्षाप्रद है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सुदृष्टदेव का उपसर्ग

पूर्वभव का बदला

अनेकोनेक स्थानोंमें विहार करते हुए एकदिन भगवान सुरभीपुरकी ओर पधार रहे थे। मार्गमें गंगा नदी पार करके सुरभिपुर जाना पड़ता था। जब भगवान गंगानदिके किनारे पहुंचे तो मल्लाहकी दृष्टि उनके शान्त और मनोहर मुख मंडल पर पड़ी। वह ऐसी छबि देखकर एकदम प्रसन्न हो उठा और भगवानसे विन्ती करने लगा कि 'प्रभु!' आप नावपर पधारिये मैं आपको उसपार उतार कर अपने को कृतकृत्य समझूंगा। भगवानने उसकी प्रेमसनी वाणी स्वीकार करली और नावपर सवार हो गये। मल्लाहने नाव खेना आरंभ करदिया।

इधर गंगानदी के किनारे एक 'सुदृष्ट नामक' देव रहता था वह पूर्वभव में एक सिंह की योनि में था। वह सिंह बिना कारण ही पूर्वभव में 'त्रिपृष्ट वासुदेव' नामक शरीरधारी भगवान महावीर द्वारा शिकार हो गया था। उसे इस समय भगवानसे अपने पूर्वभव का बदला लेनेकी सूझी। वह मनही मन सोचने लगा कि 'अपने बलके गर्वमें आकर इन्होंने निष्कारण ही मेरा वध किया था, अतः इस अवसर पर इनसे बदला लेना अच्छा है अब मैं भी इन्हें जीवित न रहने दूंगा।' कर्म की सत्ता सबसे बलवान होती है। जो जैसे कर्म करता है उसे उसका बदला अवश्य चुकाना पड़ता है। कर्म की इससत्ता के आधीन होकर कोईभी कर्जदार अपना कर्जा चुकाए बिना ऋण मुक्त नहीं हो सकता, चाहे वह राजाहो अथवा रंक, ऊंचहो या नीच, तीर्थंकर हो या अवतार–कर्म अपनी शासन सत्ता एकसी चलाते हैं)।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इतना विचार मनमें आतेही वह सुदृष्ट देव अपना बदला लेनेको उस नाव पर लपका। उसने नावके पास जाकर एक भयंकर गर्जनाकी। उस गर्जना से जितने मनुष्य नावमें बैठे हुए थे, वे सब भयभीत हो गये किन्तु भगवान महावीर ज्योंके त्यों धैर्यता से बैठे रहे। फिर वह देव भगवानको सम्बोधन कर बोला 'कि अरे तू अब अपने पूर्वजन्मका खाता चुका; अब मेरे चुंगल से तू जिन्दा नहीं बच सकता; तूनेभी विना कारण मेरे प्राण लिये थे सो अब तू भी अपने प्राण देनेको तैयार हो जा।'

इतना कहकर उसने अपनी मायासे एक बड़े वेगकी आंधी छोड़ी। पानीकी लहरें जोर--जोरसे उछाल लेने लगी। झाड़ टूट-टूटकर गिरने लगे। नाव बीच नदी में भयंकरता से ऊपर नीचे जाने लगी। मल्लाहने भी घबराकर अपनी पतवार छोड़ दी। पानी की भीषण भर्राहट से सबके होशहवाश उड़ गये। नावके डूबजाने में कोईभी कसर नहीं दिखती थी। परन्तु इतनी भयंकरता का दृश्य देखते हुए भी भगवान महावीर जराभी न घबराये। प्रभुका अलौकिक साहस और धैर्य देखकर सबके सब अपनी करुण दृष्टि उन्हींकी तरफ लगाये अपने अपने इष्ट देव को याद करने लगे।

इस भयभीत दृश्यको सम्बल और कम्बल नामके देवभी देख रहे थे। ये देवभी उसी जातिके थे जिस जातिका सुदृष्ट था। भगवान पर यह आपत्ति देख ये देव तुरन्त प्रभुके पास आये और सुदृष्टको मार भगाया और उसकी कुल माया दूर करदी। तबतो सबके जीवमें शान्ति आयी। नावभी पार लग गई और सब लोग प्रभुके प्रभावकी प्रसंशा करते हुए नावसे पार उतरे।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

६२

गोशाला

मंखली नामक एक चित्रपट दिखानेवाला और उसकी गर्भवती स्त्री एक समय शरवण ग्राममें पहुंचकर बहुल नामके ब्राह्मणकी गोशालामें ठहरे। वहां उसकी गर्भवती स्त्रीको पुत्र पैदा हुआ। वह बालक गोशालामें जन्मा था इसलिये उसके माता पिताने उसका नाम गोशाला रख दिया। समय पाकर गोशाला बड़ा हुआ। उसने भी अपने पिताका धंधा करना आरंभ किया। गोशाला बहुतही चालाक और विचित्र स्वभाव वाला था। थोड़े दिनके बादही वह अपने माता-पितासे अलग हो गया और अपनी आजीविका चलाने लगा। एक दिन गांव गांव फिरते फिरते वह राजगृहमें आ निकला वहीं भगवानभी विराजमान थे। इस समय भगवानकी तपस्याका एक मास पूरा हुआ था और दूसरा दिन पारणे का था। दूसरे दिन पारणेके लिये भगवान आहार निमित्त रवाना हुए। प्रभुको भिक्षार्थ आये हुए देख विजय सेठने श्रद्धा और सत्कारके साथ भगवान को निरवद्य अहारदान दिया। अहार लेतेही देवताओंने वहां कनक रत्नादि पांच द्रव्योंकी वर्षाकी यह समाचार बिजलीकी तरह सारे शहरमें फैल गया। गोशालाने भी यह बात सुनी। वह उसी समय भगवानको ढूंढ़ता हुआ विजय सेठके यहां आया और उक्त कथित पूर्ण वृतान्त सचाईके साथ अपनी आंखों देखा। वह सोचने लगा कि 'यह भिक्षुक साधारण भिक्षुकके समान नहीं है; यह कोई पहुंचा हुआ महा-पुरुष है। अगर मैं भी इसका शिष्य हो जाऊं तो कभी न कभी मेराभी भाग्य उदय हो जायगा'। ऐसा मनमें ठानकर वह गोशाला प्रभुके सन्मुख आया और भगवानके बिना 'हां' व 'ना'

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कहेही वह अपने को भगवानका शिष्य समझने लगा । उसी समयसे वह अपनी आजीविका भिक्षावृत्ति से करने लगा ।

भगवानका दूसरा मासक्षमणका पारणा आनन्द श्रावकके यहां और तीसरा सुदर्शन सेठके यहां हुआ उनमेंभी पूर्ववत पांच द्रव्योंकी वर्षा देवताओंने की ।

भगवानके चोथे मासक्षमणके पारणेका दिन कार्तिक शुक्ल पौर्णिमा समीप आया । उस समय शंकितहृदय गोशालाने भगवानके ज्ञानकी परीक्षा की । उसने भगवानसे पूछा 'भगवन् ! आज घर घरमें वार्षिक महोत्सव बड़े धूमधामसे मनाया जावेगा, अतः आज मुझे भिक्षामें क्या मिलेगा ?' भगवानको तो अच्छा और बुरेका कोई भान न था । तथा साधुके लिये क्या अच्छा क्या बुरा सब बराबर ही है । जैसा भोजन मिला उसीमें संतोष चाहे रूखा हो चाहे सूखा हो मगर निरवद्य चाहिये । फिरभी भगवानने उसे उत्तर दिया कि आज तो तुझे सड़ा भोजन मिलना चाहिये । भगवानके इन वचनोंको सुन गोशाला ने कुछ उपेक्षा की और भिक्षाके लिये चल दिया । दिनभर घूमनेके बाद जब उसे किसीने भोजन न दिया तो शामके समय एक गृहस्थने उसे पुकारकर बासी सड़ा हुआ भोजन दिया । भूखके मारे उसने उसी भोजनसे संतोष पाया और भगवानके वचनोंमें शंका करके मन ही मन पछताने लगा ।

चौथे मासक्षमणके पूर्ण हो जानेपर जब गोशाला भिक्षार्थ बस्तीमें गया हुआ था तब भगवानने वहांसे विहार करादिया और कोल्लाक नामक गांवमें पधार गये । वहां जाकर उन्होंने बाहुल

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नामक ब्राह्मणके यहां पारणा किया। वहां भी द्रव्यों की विपुल वर्षा हुई जिसे देख वहांके लोग चकित हो गये।

भिक्षा लेकर ज्योंही गोशाला वहां आया तो उसे प्रभु न दिखे। वह व्याकुल हो उठा और प्रभुको ढूंढता हुआ वहीं आपहुंचा जहां भगवान विराज मानथे। वह प्रभुसे बोला भगवन्! अबतो आपपर मेरी पूर्ण श्रद्धा हो गई। अबतो मैं आपका शिष्यत्व अंगीकार करता हूं। आजसे आप मेरे धर्म गुरु हुए 'अब मैं आपको छोडकर कहीं न जाऊंगा।' इस प्रकार गोशाला भगवानका आपसे आप शिष्य बन गया।

गोशाला भगवानका शिष्य तो बन गया था परन्तु वह सच्चा साधु न था। उसमें स्वार्थ, अक्षमता और क्रोध तो ज्यों के त्यों ही भरे हुए थे। रास्तेमें विहार करते उसे एकदिन श्री पार्श्वनाथ स्वामीके समुदायके चन्द्राचार्य मुनिसे भेंट हो गई। गोशालाने उन्हें ढोंगी और धूर्त कहकर संम्बोधित किया और उनसे वादाविवाद करने लगा। विवाद बढ़ जानेके कारण क्रोधमें आकर उनके प्रति चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा 'हे वेषधारियो। जाओ तुम्हारा उपाश्रय इसी समय जलकर भस्म हो जाय।' इसपर उन साधुओं ने गोशालाको समझाया कि 'तू साधु है। साधुको कभी भी क्रोध न करना चाहिये। उसे तो क्षमता धारण करनी चाहिये। साधुओंको तो क्रोध, लोभ और मोहसे सदा दूर रहना चाहिये। तेरे इस शापसे न तो हमको अथवा हमारे उपाश्रयको कुछ हो सकता है परन्तु तेरे व्यर्थ कर्म बंधते हैं। पूर्वोपार्जित कर्मोंकी निर्जराके बदले तू तो उल्टे कर्म बांधता है यह साधुके लिये तो बिलकुल ही अनर्थ का कारण है।' यह सुन गोशाला वहांसे चल दिया और शीघ्र भगवानके पास आगया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नोट—धर्मके मुख्य चार प्रकार होते हैं (१) दान (२) शील या [ब्रह्मचर्य] (३) तप और (४) भावना इनमें से प्रत्येक की महिमा शास्त्रकारोंने अलग अलग बतलाई है। दान की अपूर्व महिमाका उल्लेख इस पाठमें किया गया है। यों तो संसारमें अनेक प्रकारके दान धर्म किये जाते हैं परन्तु सुपात्र दान के बराबर कोई दान नहीं हो सकता। सुपात्र को दान देने और उसकी तप्त आत्माको शान्ति पहुंचानेमें देवताओं तकको खुशी होती है और उससे प्रभावित हो वे दानीके यहां द्रव्य वर्षा कर देते हैं। इस समय भी दान पुण्यकी महिमा किसी संकट के आड़े आती है। फिर यदि महान योगी आत्माओं को देकर द्रव्यसे भंडार भरपूर होवें इसमें अचंभा ही क्या है।

राजदण्ड

विहार करते करते भगवान और गोशाला जब चोराक ग्राममें पहुंचे तो वहां कुछ राजकर्मचारी गुप्तरूपेण चोरोंका पता लगा रहे थे। उनके मनमें साधु वेषधारी भगवान और गोशालाके प्रति शंका उपस्थित हुई। इसी संदेहमें उन्होंने भगवान और गोशाला को पकड़ लिया। उन्हें पकड़कर वे लोग ग्रामके अधिकारी के पास ले गये। अधिकारीने भी कर्मचारियों की बातों में आकर उन्हें चोर ही समझा और बिना किसी प्रकार की पूछतांछ कियेही हुक्मजारी कर दिया कि इनके हाथ पांव खूब जकड़कर बांधके बिना सिढ़ीके कुएमें डालदो। इतना हुक्म मिलते ही सिपाहियों ने उन्हें बांधकर निर्दयता से एक कुएमें ढकेल दिया। भगवान पर तो इसका कुछभी असर नहीं हुआ किन्तु गोशाला चिल्ला-चिल्लाकर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

रोने लगा और अपने भाग्य को कोसने लगा। जब गोशाला बहुत ही व्याकुल होने लगा तो समताधारी भगवान बोले 'गोशाला! तू विपत्तियों को विपत्ति न समझ; ये तो प्रकृति की विभूतियां हैं। जिस तरह बिना बादलों की टक्करके बिजली का प्रकाश नहीं होता, उसी तरह विपत्तियों के बिना गुणोंका पूरा-पूरा विकास नहीं हो पाता।' जब भगवान इस प्रकार जीवन में चमक और सुन्दरता लाने वाली बात गोशाला से कह रहे थे उसी समय भगवान पार्श्वनाथके शासनकी दो साध्वियां वहांसे निकली। उन्होंने कुएमें शब्द सुने और वहां जाकर देखा तो उन्हें भान हुआ कि इतने घोर संकटमें पड़ा हुआ साधु कितनी शान्तिके साथ दूसरे दुःखित साधुको बोध दे रहा है इस प्रशान्त, प्रसन्नचित, धीर, वीर, गंभीर तथा अपूर्व तेजस्वी महापुरुषकी बातचीतसे ऐसा प्रतीत होता है कि हो न हो शास्त्रानुसार कहीं ये अन्तिम तीर्थंकर न हों। क्योंकि मरणासन्न विपत्तिकालमें भी उनके चेहरे पर अनुपम गंभीरता, प्रसन्नता, निर्भिकता और पूर्वोपार्जित कर्मोंके कठोरसे कठोर फलोंको चुकाने की उत्सुकता, शरीरकी कमनीय कान्ति और असाधारण तेज ये सब गुण एक साथ यह बता रहे हैं कि ये महापुरुष अवश्य ही अन्तिम तीर्थंकर होना चाहिये।

इस प्रकार विचार कर वे साध्वियां शीघ्रही उस स्थानके अधिकारीके पास गईं और उन्हें सारा वृतान्त कह सुनाया। अधिकारीने साध्वियोंकी बातें सुन सिपाहियोंको हुक्म दिया कि शीघ्रही उन महापुरुषोंको कुएमें से निकालो। आज्ञा मिलतेही सिपाही लोग कुएके समीप पहुंचे और भगवान और गोशालाको उसमें से निकाला। अधिकारीभी वहां आपहुंचा और भगवानको

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उक्त कथित सर्वगुण सम्पन्न देखकर बहुत लज्जित हो बार बार पछताने लगा। अपने बिना विचारे अपराधके लिये वह बारंबार भगवानसे क्षमा याचना करने लगा। करुणादृष्टि भगवानने भी अपना हाथ ऊंचा कर अधिकारी और सिपाहियोंको क्षमा प्रदान की और आगेकी ओर विहार कर दिया।

वहां से चलकर प्रभु हरिद्रु नामक गांवमें आये और गांवके बाहर एक वृक्षके नीचे ध्यान लगा दिया। वहां रात्रिको ठहरे हुए व्यापारियोंने शीतकाल के ठंड के कारण आग जला रक्खी थी। वह आग जलते जलते प्रभुके पांव के आस पास चारों ओर फैल गई। गोशाला तो वहांसे दूर भाग गया परन्तु भगवान ज्यों के त्यों अपने ध्यानमें निश्चल खड़े रहे। प्रातः काल होते ही जब भगवानकी ध्यान मुद्रा खुली तो गोशाला ने पुनः भगवानकी अवहेलनाकी और कहा कि आप अपने पांवकी ओर निहारये। प्रभुने उत्तर दिया कि 'गोशाला! मुझे इससे कुछभी संताप नहीं, कर्मोंका खाता तो ब्याज समेत चुकाना ही पड़ेगा। ये टल नहीं सकता। इस लिये क्षमता के साथ इसे खुशीसे भोगनाही साधुके लिये अधिक हितकर है।' प्रभुकी इस वाणीको सुन गोशाला भी उसी दिन से प्रभुके समान क्षमताधारी बनने की भावना करने लगा। पश्चात प्रभुने वहां से भी विहार कर दिया।

अनेकानेक कष्टोंको सहन करते हुए गोशाला के साथ जब प्रभु विहार कर रहे थे तो एक दिन राह चलते चलते दो मार्ग मिले। यहां गोशालाने भगवानसे कहा 'प्रभु! कष्ट सहते सहते मेरा जी ऊब गया। मैं चाहता हूं कि आपका साथ न छोडूं, पर भगवन्! मैं इन कठिन वेदनाओंको अधिक काल तक सहन

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नहीं कर सकता। अतः मैं आपसे अब अलग होकर अपने भाग्य का निपटारा स्वयं करना चाहता हूं।' इस प्रकार विदा मांगकर गोशाला प्रभुसे अलग होकर दूसरे मार्गसे चल दिया और कई तरहके नवीन कर्म उपार्जन किये जिसका वर्णन अन्यत्र ग्रन्थोंमें पाया जाता है।

अनार्य देश

भगवान महावीरने अपने चार चतुर्मास तो उक्त कथित स्थानों में अनेकानेक उपसर्गोंको सहन करते हुए बिताये। उन्होंने अपना पांचवा चतुर्मास भद्दिलपुरमें, छटवां भद्रिकापुरीमें, सातवां आलंबिकापुरीमें और आठवां चतुर्मास राजगृहमें किया। इन चतुर्मासोंमें भगवान पर शालामी नामक एक व्यंतरी के उपसर्गों को छोड़कर कोई उपसर्ग नहीं हुए।

इधर नानाप्रकारके कष्ट और अपमानोंको सहता हुआ गोशाला प्रभुकी खोज करने लगा। उसे अब मालूम हुआ कि बिना प्रभुकेसत्संग के गति नहीं। एक समय जब प्रभु भद्रिकापुरी में पधारे तो गोशालाभी अकस्मात् प्रभुको ढूंढता हुआ वहां आ पहुंचा। प्रभुके पास आकर उसने अपने अपराधोंकी क्षमा मांगी और प्रार्थनाकी 'प्रभु! मुझे फिरसे अपनाइये, मैंने जैसा किया वैसा पाया; मेरे अपराध क्षमा कीजिये।' परम दयालु भगवानने उसे फिर अपना लिया।

विचरते विचरते प्रभु महावीरने अपना नवमा चतुर्मास अनार्य देशमें करने का निश्चय किया और उस ओर रवाना हो

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

गये। अनार्य देशको लाटदेशभी कहते थे। वहां के लोग बहुत क्रूर और घोर हिंसक थे। ताड़ना, मारना और भांति भांतिके कष्ट पहुंचाना ये तो उनके प्रतिदिनके कार्य थे। ऐसे क्रूर और अविवेकी मनुष्योंको अपने आदर्श स्वभावसे सीधी राह पर लाने के लिये और अपने कर्मोंकी निर्जरा के हेतु ही भगवानने अपना नवमां चतुर्मास अनार्य देशमें किया।

जब भगवान अनार्य देश (लाट देश) में पहुंचे तो वहां के लोगोंने कौतूहलवश उनपर डंडे चलाना और गंदली गालियां देना शुरू कर दिया। उनपर कोई धूल फेंकता, कोई कुत्ते छुछलता और कोई कोई नानार्त्तिध पीड़ा पहुंचाकर खुशी मनाते थे। भगवान इन सब बातोंको विना द्वेष आनन्दपूर्वक सहते जाते थे। जब प्रभु किसी खंडहरमें ध्यान करनेके लिये जाते तो वहां के पड़ोसी उन्हें धक्का मुक्का मारकर निकाल देते थे। इतनाही नहीं कहीं कहीं तो प्रभुको थप्पड़ों और घूंसोंका भी स्वागत करना पड़ता था। नानाप्रकारसे शारीरिक दण्ड देते समय जब वे लोग भगवानसे उनका परिचय पूछने और मौन या ध्यानके कारण प्रभुके मुखसे वे कुछ न सुनते तबतो उनके क्रोधकी सीमा न रहती। वे उन्हें ढोंगी अथवा पक्का चोर समझ उनपर कोड़ोंकी मार बरसाने लगते और कहीं कहीं उन्हें जकड़कर बांध भी देते थे। परन्तु भगवान तो इन सब परीसहोंको प्रसन्न वदन सहन कर लेते और कभी कोई खंडहर मिल जाता तो वहीं ध्यान मग्न हो जाते थे। इस अनार्य देशमें कड़ाके की ठंडमें और गर्मीके दिनोंमें पूर्ण तप्त चट्टानों पर कई दिनों तक ध्यान मग्न रहते देख मानव हृदय कंपायमान हो जाता था। परन्तु भगवान अपने कर्मोंकी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

निर्जरा मेरुके समान अचल और साम्यभावके साथ करनेमें कटि-बद्ध थे। इस प्रकार विचरण करते करते अपरिमित कायिक और मानसिक कष्टोंको प्रसन्नचित सहते सहते प्रभुने अपना नवमां चतुर्मास उसी लाट देशमें बिता दिया। गोशालाने भी प्रभुके साथ साथ सभी कष्ट शक्ति अनुसार सहे। चतुर्मास पूर्ण हो जाने पर प्रभुने उस अनार्य देशसे विहार कर दिया।

तेजो लेश्या और आजीविका सिद्धान्त

अनार्य देशसे भगवान महावीर कूर्म गांवमें पधार। उस गांवमें वैशायन नामका एक तपस्वी रहता था जो दो दो दिनके उपवासकी तपस्या करता था और सूर्याभिमुख होकर ध्यानमें स्थिर रहता था। उसके सिरकी बड़ी बड़ी जटाओं में जूएंभी रगने लगी थी। इस उग्र तपस्याके यथावत प्रभावसे उसे तेजोलेश्या की सिद्धी हो चुकी थी जिसके द्वारा अग्निकी ज्वालाएं प्रगट होकर मनुष्य को भस्म कर सकती थीं।

एक दिन गोशालाभी घूमते-घूमते वहां से निकला। उसने उस तपस्वीको देखकर तिरस्कार किया और उसकी तपस्याकी घोर निन्दाकी और हंसी उड़ाई। तबतो वह तपस्वी गोशालाके प्रति क्रुद्ध होकर अपनेको न सम्हाल सका और उसी समय उसने अपने तपोबलसे तेजोलेश्या नामक तपोशक्ति गोशालाके विरुद्ध छोड़ी। उस अग्निकी भयंकर ज्वालाएं जब गोशालाके निकट पहुंचने लगी तब तो वह भयभीत हो वहां से भागा और शीघ्रातिशीघ्र भगवान महावीरके पास आकर चिल्लाने लगा 'भगवन्! मुझे बचाइये, मुझे बचाइये, मैं तो भस्म हुआ जाता हूं इत्यादि।'

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

यह देख प्रभुने अपनी शान्ति मुद्राके प्रभावसे उस ज्वालाके प्रति शान्त होजानेके लिये अपना खुला हाथ ऊंचा किया। प्रभुकी ठंडी दृष्टिके प्रभावसे वह ज्वाला उसी क्षण शान्त हो गई और गोशालाभी भस्म होजाने से बच गया।

भगवानकी शान्त दृष्टिका यह चमत्कार देख उस तपस्वीको बहुत अचंभा हुआ। वह शीघ्र भगवानके पास आया और अपनी तपस्या से भगवान की तपस्या को बलवती पा उनके गुणोंकी प्रसंशा करने लगा। उसकी तप शक्तिका गर्व तो जाता रहा और उसके स्थानपर उसके हृदयमें भगवानके प्रति भक्ति भाव जागृत हुआ। वह उसी समयसे भगवानका भक्त हो गया।

उस तपस्वीके यहां से चले जाने के बाद गोशालाने भगवान से पूछा 'भगवन! यह तेजो लेश्या किस प्रकार प्राप्त होती है?' तब बोले कि 'छै माहतक बेले बेले तप और सूर्यके सन्मुख आतापना करे, और पारणेके दिन एक मुठी उड़द और चुल्लू भर पानी पीकर रहे तो तेजोलेश्या प्राप्त होती है।'

भगवानके इस प्रकार वचन सुन गोशालाभी उक्त तप करने में जुट गया। छैमाह तक उक्त कथित तपस्या करके उसने तेजोलेश्या प्राप्त करली। तेजोलेश्या प्राप्त होनेके बाद उसने उसका दुरुपयोग करना आरंभ किया। अपने स्वभावानुसार जगह जगह वह मनुष्योंको भांति भांतिके कष्ट पहुंचाने लगा। पश्चात भगवान पार्श्वनाथके सन्तानिक कुछ शिष्यों द्वारा उसने 'अष्टांग निमित्त' का ज्ञान प्राप्त कर लिया। अबतो गोशालाको दो प्रचन्ड शक्तियां प्राप्त होगईं जिसके कारण वह अपनेको जिनेश्वर कहने लगा।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कुछ दिन बाद वह फिर भगवानसे अलग हो गया और इन दो सिद्धियों द्वारा वह लोगोंको 'आजीविक सिद्धान्त' का उपदेश देने लगा। अपनी सिद्धियोंका प्रभाव दिखाकर वह अपनेको चौवीसवां तीर्थंकर कहने लगा। अबतो भोले-भाले लोग इसकी माया जालमें फंसने लगे और उनकी संख्या भी काफी तादादमें बढ़ गई।

इधर भगवानको केवल ज्ञान न होनेके कारण मौनस्थ होकर ही रहना पड़ा, क्योंकि तीर्थंकर विना पूर्णज्ञान प्राप्त किये धर्मोपदेशही नहीं देते। इसी समय जब भगवान छद्मस्त अवस्थामें ही थे तब आजीविक समाज की संख्या भगवान महावीरके अनुयायियों की अपेक्षा किञ्चित अधिक होगई। परन्तु उसके सिद्धान्त अपूर्ण और नितान्त निर्बल होनेके कारण नाम शेष रह गये। इसीलिये आज आजीविक समाज का एक भी अनुयायी नजर नहीं आता।

नोट—अष्टांग निमित्तका ज्ञान प्रायः वह ज्ञान है जिसके आधार से जन्म-मरण, हानि लाभ, सुख-दुख आदि बातोंको मनुष्य तत्काल बता सकता है।

संगमदेव द्वारा उपसर्गों की वर्षा और अनुपम-सत्याग्रह

शांन्तता और वीतराग भावसे अनेकानेक उपसर्गोंको सहते हुए प्रभु पेढ़ाणा ग्राममें पधारे। वहां पहुंचकर एक उपवनमें

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगवान ध्यानस्थ हो गये और छै मासी तपका आराधन आरंभ कर दिया।

'यहां पर जो उपसर्ग भगवानको हुए हैं उनका वर्णन करते हृदय कांपता है, धैर्य दहल जाता है, लेखनी रोती है, प्रकृति अस्तित्व शून्य बन जाती है, परन्तु भगवानके अविचल वैराग्य, आदर्श संयम, अद्भुत तपोबल उत्तम भावना आत्मकल्याणका निश्चल वृत उन सम्पूर्ण उपसर्गोंको तुषार पीड़ित और बेकाम कर देता है। यह है अविचल दृढ़ता की संगीत कसौटी और अनुपम सत्याग्रह का नमूना।'

जब प्रभु ध्यानस्थ हो छै मासी तप कर रहे थे उस समय देवराज इन्द्रने अपनी सभामें भगवानके संयम, तप और चरित्र बलकी बहुत प्रसंशा की। यह सुनकर सभाका एक संगम नामका देव प्रभुके विरुद्ध ईर्षालु होगया। वह सोचने लगा कि 'देव सभामें मृत्यु लोकके शरीरधारी आत्माकी इतनी प्रसंशा कदापि वाञ्छनीय नहीं। मैं अभी वहां जाता हूं और महावीरको हरतरह से उसके तप, संयम, शील और सदाचारमें परास्त कर देवराज इन्द्रके इस कथन का खंडन करता हूं जिससे उन्हें भी किसीकी मिथ्या प्रसंशा करनेका देव सभामें साहस न हो।' इस प्रकार गन्दले विचार मनमें आतेही भगवानको परास्त करने के हेतु वह संगमदेव वहां आया जहां प्रभु ध्यानस्थ तपस्या कर रहे थे।

प्रभुके शान्त, अचल निष्काम और लोकोपकारी शरीरको देखकर संगमका ईर्षाभाव दुगना होगया। उसीक्षण उसने प्रभुको ध्यानसे डिगानेके लिये अपनी मायासे घटाटोप धूलिकी बहुत

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

देर तक कड़ी वर्षाकी। चारों तरफ पृथ्वी धूलिसे भर गई, सम्पूर्ण वायुमंडल रजमिश्रित हो गया। सहस्रों जीवधारी प्राण रहित होगये और भगवानका शरीरभी धूलिसे ढक गया। चहुंओर प्रलयकारी भयानक दृश्य फैल गया। परन्तु भगवान पूर्ववत सुमेरु के समान अविचल तथा महासागर के सदृश गंभीरताको धारण किये, बिना गतिमान हुए ज्योंके त्यों ध्यानस्थ खड़े रहे।

यह देख संगम और भी क्रोधित हुआ और अपनी उग्र मायासे वहां उसने भयंकर विषैली चीटियों को उत्पन्न किया। उन चीटियोंसे प्रभुके शरीरके प्रत्येक भागको बहुत निर्दयतासे कटवाया। ऐसी निर्दयताको देख कलेजा थरथरा जाता है, धैर्य पलायन कर जाता है। परन्तु आत्म संयमी, दृढ़ संकल्पी, तपोनिधी भगवान, जिन्हें शरीर की कुछभी परवाह नहीं है, ऐसे भयंकर आतंक में भी पूर्ण निश्चल, निर्भीक और अपूर्व शान्तता धारण किये हुए ध्यानमग्न हैं।

ऐसी अवस्था में प्रभु का देख संगम का पारा और भी चढ़ गया। उसने तीसरी बार विषैले सर्प, बिच्छू, गोहरे आदि महा भयकर जन्तुओं को उत्पन्न कर प्रभु के शरीर पर छोड़ा। उन जन्तुओंने भी अपने मन की अच्छी तरह कर ली। परन्तु जहां चण्डकौशिक सरीखे विषधर से भी प्रभुका कुछ न बिगड़ सका तो ये मायावी विषैले जन्तु बिचारे क्या कर सकते थे। इतना सब कुछ होनेपर भी प्रभु के मन में लेशमात्र भी द्वेष पैदा न हुआ। वे तो अपने आत्म बल से सभी उपसर्गों को शान्तता पूर्वक सहते चले गये। इस प्रकार पूरे छै महीने तक संगमने प्रभु के शरीरपर अनेक प्रकार की आपत्तियां ढाईं। जिसे पढ़कर पाषाण हृदय भी चूर-चूर हो जाता है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रभुके उत्कट तपोबलके सामने, देव होकर भी जब संगमकी राक्षसी क्रियाएं और प्रयत्न सब विफल हो चुके तब तो उसने मनुष्यशरीरके बिल्कुल अनुकूल काम वासनाके प्रखरतम प्रयोगोंका वार करना प्रारम्भ किया। उसने अपनी मायासे चारों ओर वसन्त ऋतु की रचना कर दी। फिर नाना प्रकारके कामोत्तेजक पदार्थोंसे उस वनस्थलको परिपूरित कर दिया। पश्चात् संगमने कामकलाओंमें पारंगत, रूपलावण्यमें अनुपम और पूर्ण यौवन सम्पन्न कामिनियों को एकत्रित कर वहां एक बड़ी संख्यामें उपस्थित कर दिया।

अब तो भगवान के आस पास उस फूली फली वसन्तमें चंचल और दीर्घ नयनोंवाली, यौवनके अभिमानमें माती, पतली कमर और लंबे केस वाली, और तत्क्षण कामोद्दीपन करने वाली युवतियां अपने हाव भावसे प्रभु को मोहने लगीं। कोई गाती हुई, कोई बजाती हुई, कोई-कोई नृत्य करती हुई, कोई मनचली कामिनी गाढ़ आलिंगन कर प्रभुकी कामवासनाको जागृत करने लगी। कोई-कोई गल बहियां डालकर मधुर मधुर बातें कह कह कर प्रभु को फुसलाने लगी। परन्तु इन सबके हाव, भाव, कटाक्ष और कारनामे सब फूसकी राखके समान बेकाम हुए। इन बातोंका प्रभु पर लेशमात्र भी असर न हुआ। वे तो अपने ध्यानमें हिमाचलके समान अटलके अटल ही बने रहे।

अभीतक तो उस संगम देवकी सम्पूर्ण शक्तियोंका प्रभु के आगे भारी अपमान हुआ परन्तु उसकी डाहमें कमी न हुई। संपूर्णतया हर एक प्रयोगोंमें परास्त हो अब वह चिंतातुर सोचने लगा कि "छै माह होने आये मेरी हार पर हार ही होती गई। मैं स्वर्ग

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

में जाकर अब मुंह कैसे दिखाऊंगा। वहांसे तो मैं घमंड पूर्वक इन्द्र महाराजके कथनका खंडन करने आया था, परन्तु यहां तो अनेकों बार मुझे पूर्ण हताश होना पड़ा। पूर्ण छै मासके दमन-चक्रके बाद भी मुझे यहांसे निर्लज्ज और निराश होकर स्वर्ग में जाना पड़ेगा। यह तो बड़े गजबका मनुष्य है। अबकी बार एक और परीक्षा करता हूं।" यह कहकर वह संगम देव वहांसे चला।

इतनेमें भगवानकी छै माही तपस्या पूर्ण हुई। फिर भगवान अहार लेनेको गोकुल ग्राममें पधारे। उस ग्राममें जहां जहां प्रभु उस समय अहार लेने गये वहां वहां संगमने निर्दोष अहारको अपनी मायासे दोषयुक्त कर दिया। तब तो बिना अहार पानी लिये ही प्रभु अपनी पूर्ववत शान्तिमें स्थिर रहे। संगम कदाचित् यह समझता था कि छै महीने तक अखंड तपस्या करके अब इन्हें अहार न मिलेगा तो ये अवश्य डिगामिगा जावेंगे और इनका क्रोध संदीप्त हो जायगा। परन्तु भगवान तो अन्ततः वीर ही थे, उन्होंने उसके प्रति कुछ भी द्वेष न किया। तब तो अतुलनीय सहनशक्ति अनुपम साधुवृत्ति और अटल निश्चय और उत्कट सत्याग्रह देख संगमका हृदय चूर-चूर हो गया। अब इन्द्र द्वारा प्रशंसित भगवान के प्रति उसकी भक्ति जागृत हुई। वह प्रभु के पास आया और अपने इतने कड़े और भयंकर अपराधोंकी क्षमा याचना करने लगा प्रभुने उसे अपनी शान्त दृष्टिसे क्षमा प्रदान की। तदनन्तर संगम अपने कृत अपराधों पर लज्जित हो स्वर्गको चला गया।

इधर संगमके चले जानेपर भगवानने उसी गोकुल ग्राममें एक गोपिकाके घर अहार ग्रहण किया। इस प्रकार कठिन से कठिन तपस्वियों, तेजस्वियों और शूरवीरोंके मनको क्षण भरमें

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

चलायमान कर देनेवाले उपसर्गों और संकटोंको शान्तता पूर्वक सहन कर और अपने अविचल सत्य द्वारा उनपर विजय प्राप्त कर प्रभुने वहां से विहार कर दिया ॥

नोट—इस पाठसे सत्याग्रहकी कड़ी परीक्षाका अनुमान होता है। इसमें जो उत्तीर्ण होते हैं उनके आगे संसारकी भारीसे भारी शक्तियां झुक जाती हैं और अन्तमें विजय श्री उनकी दासी बन जाती है। यह है सच्चे वीरोंकी वीरताकी उज्ज्वल चमक का जीवित उदाहरण।

भगवानका अभिग्रह और चन्दनबाला

इस प्रकार विचरते हुए भगवानने अपना ग्यारहवां चातुर्मास वैशालीमें किया और वहांसे कई स्थानोंको अपने चरण कमलों द्वारा पवित्र करते हुए कोशाम्बीमें पधारे।

उस समय वहां राजा शतानीक राज्य करता था, उसकी रानी मृगावती थी। उसी नगरीमें धनावह नामका एक सेठ रहता था, जिसकी मूला नामकी कलहकारिणी ईर्षालु स्त्री थी।

इस नगरीमें आकर प्रभुने बड़ा ही कड़ा अभिग्रह धारण किया, जिसमें कई बातोंका समावेश होता है, उन्होंने निश्चय किया कि अब तो (१) अहार किसी राजकन्याके हाथसे ग्रहण करना (२) वह राजकन्या बिकी हुई होना (३) उसके पैरों में बेड़ियां पड़ी हों (४) उसका सिर मूंडा हुआ हो (५) जो तीन दिनके उपवाससे युक्त हो (६) उड़दके बाकुले अहारमें देवे (७)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बाकुले सूपमें हों (८) जिस समय वह कन्या अहार दे तो उसका एक पांव देहलीके बाहर और एक भीतर हो और (९) जिसकी आंखोंसे अश्रुधारा बहती हो।

इस प्रकार अभिग्रह धारण कर भगवान प्रतिदिन कोशाम्बी नगरीमें जाते परन्तु उक्त प्रकारकी योजना कहीं भी प्राप्त न होती। ऐसा करते-करते पूर्ण चार माह व्यतीत हो गये परन्तु कहीं भी अपने अभिग्रह अनुसार भोजन प्राप्त नहीं हुआ। यह बात बस्ती के राजा, मन्त्री वगैरहको मालूम हुई तबतो नगर में भारी चिंता फैल गई। बड़े-ज्योतिषियोंने भी भगवानके अभिग्रह को मालूम करनेका प्रयत्न किया मगर वे सफल न हुए। चार मास पूर्ण हो जानेपर भी अभिग्रह सफल न हुआ। जबतक दूसरी ओर क्या-क्या घटना घटी है उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

उस समय नगरी चम्पावतीमें राजा दधिवाहन राज्य करते थे। उनकी धारिणी नामकी पतिव्रता रानी थी। उनकी महाशीलवती वसुमति नामकी कन्या थी। ये तीनों ही प्राणी पूर्ण धर्मात्मा थे; रात दिन जिनेश्वर पूजनमें बिताते और मोक्षके मार्गका साधन करते थे। एक दिन अचानक ही उनपर आपत्तियोंका पहाड़ टूट पड़ा। कोशाम्बीका राजा शतानीक किसी कारण चम्पावती के राजा दधिवाहनसे क्रुद्ध हो गया। वह अपना सैन्य-दल लेकर दधिवाहनपर चढ़ आया। युद्ध होनेपर दधिवाहन हार गया और नगर छोड़कर भाग निकला। शतानीकने राजधानीमें प्रवेश कर लूट मचा दी। उसी लूटमें एक सुभट दधिवाहनकी पतिव्रता रानी धारिणी और कन्या वसुमतिको उड़ा ले गया रास्तेमें उस सुभटने रानी धारिणीके प्रति अपनी दुईच्छा प्रगट की। रानीने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उसे वहीं खूब फटकारा और उसका तिरस्कार किया। फिर भी वह सुभट रानीके अनेक प्रकारकी कुचेष्टाएं करता ही जाता। तब तो रानीने अपनी लाज और धर्मको बचानेके हेतु तुरन्त अनशन व्रत धारण कर लिया और अपने सिरके लम्बे केशों द्वारा आत्म-घात कर प्राण छोड़ दिये।

यह हाल देख बसुमति घबरा गई और चिल्ला चिल्लाकर रोने लगी। उसके करुण क्रन्दन से सुभट का दिल पिघल गया और उसने मातृहीन उसक न्याको पालन का अभिवचन देकर अपनी पुत्री एवं बहिन बनाकर घर ले आया।

रूप और लावण्य से परिपूर्ण उस कन्याके साथमें सुभटको घरमें आया देख उसकी स्त्री क्रोधसे ज्वलित हो गई और उसने उस सुभटको खूब ही उलटे हाथ लेना शुरु किया। तब तो वह बसुमतिके प्रति अपने सब अभिवचन भूल गया और बसुमतिको बाजारमें लाकर एक वेश्याको बेच डाला। बसुमति तो पूर्ण शील-वती थी, वह अपने को वेश्याके हाथ बेची समझ घबराने लगी और अपने भाग्यको कोसने लगी; क्योंकि वेश्याके यहां उसके शील की रक्षा होना बिलकुल असंभव था। वह मन ही मन नमस्कार मंत्रका जाप जपने लगी और प्रभुसे प्रार्थना करने लगी कि "हे प्रभु! अब तो मेरे शील की रक्षा के सहायक आप हैं रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये"।

जब बसुमति उस वेश्याके साथ भगवान का स्मरण करती हुई जा रही थी उसी समय बीचमें ही कुछ देवताओं ने बन्दरों का रूप धारण कर उस वेश्या को बुरी तरह नोच खरोंच डाला।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तब तो यह सौदा अपशकुन का समझ उस वेश्याने वसुमति को उस सुभटके पास लाकर उसे फिरसे सौंप दिया और अपने पैसे वापिस ले घर चली गई। बादमें उस सुभटने उस कन्याको धनावह सेठको बेची। धनावह सेठकी कोई संतान न थी इसलिये उसने बड़े प्रेम से वसुमतिको अपनी मानकर घर ले आया। और उसका नाम चन्दनबाला रक्खा ज्योंहीं चन्दनबाला सेठ धनावहके साथ घरमें आई त्योंही उसे देख सेठकी गृहणी मूलाके मनमें ईर्षा पैदा होने लगी। एक दिन मूला कहीं बाहर गई हुई थी कि सेठजी घरमें आये और पैर धोने को पानी मांगा। मूला घरमें न थी इसलिये चन्दनबालाने अपने पितासे कहा "पिताजी! माताजी घरमें नहीं नहीं हैं, मैं स्नान कर रही हूं, आप यहीं पधार जावें तो मैं ही आपके पांव धुला देऊं" यह सुन सेठ चन्दनबालाके पास गया। चन्दनबाला सेठजी के पांव पर पानी डालने लगी। इतनेमें ही मूला वहां आ पहुंची और चन्दनबाला का यह कार्य देख मन ही मन क्रोधित हो गई। अब तो उसकी ईर्षा चंदनबाला के प्रति और भी बढ़ गई।

फिर एक दिन जब सेठजी बाहर गांव गये थे, तब कोई बहाना ढूंढ़कर मूला चन्दनबालापर क्रोधित हो गई। उसने तुरन्त एक नाईको बुलाकर उसका सिर मुंडवा दिया और लोहार द्वारा उसके पैरोंमें बेड़ी डलवाकर अपने मकानकी एक कोठरीमें उसे कोड़ दिया। वहां चन्दनबालाने तेले अर्थात् तीन दिनके उपवास की तपस्या धारण कर ली। तीसरे दिन जब सेठ जी घर आये तो देखा कि मूला तो अपनी माताके घर चली गई और चन्दनबालाका पता नहीं। उन्होंने अड़ोसी-पड़ोसी से बहुतेरी पूछताछ

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

की। तब एक पड़ोसी बोला कि 'गड़बड़ मचानेके पहले अपना घर भली भांति देख लो।' सेठजीने उसकी बात मान ली और घर की सब कोठरियां देखना आरम्भ कर दिया। देखते-देखते एक कोठरीमें चन्दनबालाको बेड़ीसे जकड़ी हुई पाया। सेठ उसी समय चन्दनबालाको बाहर लाया और सामनेकी ड्योढ़ीपर लाकर नजदीक सूपमें पड़े हुए उड़दके बाकुले उसके सामने धर दिये और उसकी बेड़ी कटवानेके लिए लोहार बुलाने चले गये।

इस दिन चन्दनबालाका तेलेका पारणा था। उसके मन में यह भावना उत्पन्न हो रही थी कि यदि यहां कोई सन्त मुनिराज आ जावें तो उन्हें कुछ अहार कराकर पारणा करूं। इतनेमें ही भगवान महावीर पारणेके हेतु पधारे। अपने अभिग्रहको सफल होते पूर्ण पांच माह पच्चीस दिन हो गये और ज्यों ही वे चन्दनबालाके यहां पहुंचे तो वहां अभिग्रहकी एक बातको छोड़ शेष सब बातें उन्हें मिल गयीं, परन्तु वह एक बात न होनेके कारण वे वहांसे लौट पड़े। यह देख चन्दनबाला अपनेको धिक्कारती हुई रो पड़ी और उसकी आंखोंसे अश्रुधारा बह निकली; बस यही एक बात होनेको थी कि भगवानकी दृष्टि पुनः उसपर पड़ी। भगवानने अपने अभिग्रहकी कुल सामग्री एक ही स्थानमें पाकर उन उड़दके बाकुलोंसे पारणा किया। बस फिर क्या था, देवदुंदुभि बाजने लगी और चन्दनबालाकी लोहेकी बेड़ी स्वर्णकी होकर आपसे आप टूट पड़ी। देवोंने भी धनावहके घर पंचद्रव्यों और रत्नोंकी वर्षा की। भगवानने चन्दनबालाके घर पारणा कर अन्यत्र बिहार कर दिया। आगे जब भगवानको केवल ज्ञान हुआ तब चन्दनबालाने भी दीक्षा ग्रहण करली और अपना शेष जीवन आत्मसंशोधनमें लगाकर मुक्तिका मार्ग पकड़ लिया॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगवानका बारवां चातुर्मास
और
अन्तिम-उपसर्ग

भगवान महावीर उपसर्गोंके ऊपर उपसर्गोंको इस प्रकार सहते-सहते और कठिन से कठिन तपस्या करते हुए चंपा नगरीमें पधारे। अग्निहोत्री ब्राह्मणों की धर्मशालामें ठहरकर अपना बारवां चतुर्मास वहीं किया। यहां चार महीने की तपस्या कर वर्षा बीत जानेपर पारणा किया। और षणमानी गांव की ओर विहार कर दिया।

वहां आकर बस्तीके निकटवर्ती वनमें प्रभु एक वृक्षके नीचे ध्यानस्थ हो रहे। अपने बैलोंको चराता हुआ एक ग्वाला वहां आ निकला और अपने बैलोंको वहीं चरते हुए छोड़ वह थोड़ी देर के लिये अन्यत्र चला गया। बैल चरते चरते दूर चले गये, इतनेमें ही वह ग्वाला वहां आया और वहां बैलोंको न देखा। वह ध्यानस्थ प्रभुसे पूछने लगा कि 'मेरे बैल कहां गये?' मगर प्रभुसे कुछ उत्तर न पाकर वह बैलोंको ढूढ़नेके लिये जंगलमें इधर उधर भटकने लगा। जब खूब हैरान हो गया तब वह ग्वाला पुनः प्रभुके निकट आया और वहां देखा तो बैल चर रहे थे। यह देख उस ग्वालको एक दम क्रोध आ गया। वह सोचने लगा कि हो न हो यह ध्यानस्थ मनुष्य कोई ठग है। इसे उचित दण्ड देना चाहिये। इतना विचार मनमें आते ही उसने लकड़ी की दो खिली अपनी कुल्हाड़ीसे बनाई और प्रभुके दोनों कानों में ठोक दी। उस समय प्रभुको अतुलनीय वेदना अवश्य हुई होगी परन्तु कर्मोंका बदला

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बिना चुकाये काम ही नहीं चलता। पूर्व भवमें जब प्रभु त्रिपृष्ठ वासुदेव थे उसी समय यह ग्वाल एक शय्यापालक था। उस त्रिपृष्ठ वासुदेवके भवमें प्रभुने, राजमदमें आ कर एक छोटेसे अपराध के कारण, गरमागरम सीसा पिघलाकर उस शय्यापालके कानों में डलवाया था। उसी का बदला आज प्रभु चुका रहे हैं। इतनी कडी वेदना होने पर भी प्रभु जरा भी चल विचल न हुए। बल्कि अपने निश्चय चित्त और अमोघ धैर्यके साथ ज्यों के त्यों अटल ध्यानस्थ खड़े रहे।

जब प्रभुकी ध्यान मुद्रा खुली तो उन्होंने वहां से पड़ोसकी एक दूसरी बस्तीकी ओर बिहार कर दिया। वहा 'खाफ' नामका वैद्य रहता था। उसने प्रभुकी मुखाकृति देखकर पहचाना कि प्रभुको अवश्य कोई शारीरिक पीड़ा है। तत्काल उसने प्रभु के शरीरको देखा तो उसे कानोंमें दो कीलें दिखाई दीं। इस दृश्यको देख वह कांप उठा और सिद्धार्थ नामक सेठकी सहायतासे भगवानके कानों की कीलें बाहर निकालकर फेंक दी। जिससे भगवानकी पीड़ा दूर हुई और खाफ वैद्यको भारी पुण्य बंध हुआ।

प्रभुको केवल ज्ञान

भगवान महावीरने पूर्ण साढ़े बारह वर्षतक भयंकरसे भयंकर उपसर्गोंको सहन किया। उन्होंने उग्र से उग्र तपस्या धारण कर अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंका बदला हंसते-हंसते चुका दिया। इन साढ़े बारह वर्षोंमें प्रभुने पूर्ण एक वर्ष भी भोजन नहीं किया। इस अवसरमें शत्रुओंने भारीसे भारी आक्रमण प्रभुपर किये।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परन्तु पशुबल सदैव मुंहकी खाता रहा। प्रतिपक्षियोंपर प्रभुकी ओरसे तनिक भी वार न हुआ तिसपर भी विजयश्रीने अन्तमें भगवानको ही वरा और शत्रुओं के पैर उखड़ गये। प्रभुका यह दिव्य चरित्र मूक-भावसे हमारे सामने आत्मबलका एक उत्तम आदर्श रखता है।

प्रभुने जितना तप किया वह प्रतिज्ञा-पूर्वक ही किया। ध्यान, मौन, आसन, समाधि और आत्मा चिन्तवन कर अन्तमें शुक्ल ध्यानरूपी जाज्वल्यमान अग्निमें उन्होंने अपने चार आत्माको डुबाने वाले घनघाति (ज्ञाना वरणी, दर्शना वरणी, मोहनीय और अन्तराय) कर्मों को भस्म कर दिया।

अब जिस ज्ञानके अभावसे दुनिया अन्धकारमें गोता खा रही है, जिस ज्ञानके अभावमें जनता मिथ्या रूढ़ियोंके वशीभूत संसारमें अनर्थ कर रही है, जिस ज्ञानके न होनेसे लोग ममत्व, माया और तृष्णाके गुलाम बन रहे हैं, जिस ज्ञानके अभावमें सबल निर्बलोंका अन्यायपूर्ण हनन कर रहे हैं, जिस ज्ञानसे रहित संसार एक क्लेश कदागृह और बर्बरताका स्थान बन रहा है और जिस ज्ञानके अभावमें आत्मा अपने निज गुणोंको भूलके पर स्वभावमें रत होकर कभी शांति नहीं पाती, उसी ज्ञानकी प्राप्तिके लिए भगवान महावीरने कठिनस कठिन तपश्चर्या की, मरणांत कष्टोंको भी अपूर्व शांतिके साथ सहन किया और उत्तमोत्तम भावनासे चार उक्त कथित घनघाति कर्मोंको समूल नष्ट कर— जम्बुक ग्रामके पास, रजुबालिका नदीके तीर, शालिवृक्ष के नीचे छट्ठतपयुक्त गोदुह आसन लगाये, शुक्ल ध्यानमें मग्न वैसाख

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सुदी १० के दिन विजय नामक शुभ मुहूर्तमें सर्व लोकालोकके सर्वांग द्रव्य, क्षेत्र काल और भावको जाननेवाला कैवल्यज्ञान प्राप्त किया। भगवानको यह सर्वज्ञता प्राप्त होते ही संसार भरमें आनन्द छा गया; देवी देवता और इन्द्रादिने महामहोत्सव मनाना आरम्भ कर दिया। पुष्पवृष्टि होने लगी और धार्मिक विश्रंखलता की भट्टीमें शांतिका संचार होने लगा॥

भगवान महावीरका समवसरण

केवल ज्ञान उत्पन्न होनेके पश्चात् वैसाख सुदी इग्यारसको भगवान महावीर अपापा नगरीके महासेन उद्यानमें पधारे। वहां इन्द्र महाराजके आदेशानुसार देवताओंने चांदी, सोना और रत्नमय तीन गढ, बारह दरवाजोंसे युक्त; उत्कृष्ट सिंहासन और अशोकादि वृक्षोंसे पूरित दिव्य समवरणकी रचना की। इस समवरण अर्थात व्याख्यान मण्डपकी अनुपम शोभाका वर्णन तथा उसके प्रभावका उल्लेख शास्त्रोंमें बहुत ही विस्तारपूर्वक पाया जाता है। उनमेंसे कुछ विशेषताएं इस प्रकार हैं कि—

(१) उस समवरणमें सब ही जाति और वर्णोंके मनुष्य भेदभावोंको छोड़कर एक साथ ही उपदेश सुननेको आतुर हो हो रहे थे।

(२) प्रभुके आत्मज्ञानका अलौकिक प्रकाश केवल मनुष्य मात्र तक सीमित न था, वरन् पशुपक्षियों एवं प्राणीमात्रको पारलौकिक सुखका अनुभव करानेवाला था।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

(३) उस व्याख्यान मण्डपमें हिंसकसे हिंसक पशु-पक्षी भी अपनी क्रूरताको तजकर, आत्म-कल्याणके हेतु शान्ततापूर्वक विराजमान थे।

(४) उस मण्डपमें जो-जो प्राणिमात्र आकर बैठे थे उन सभीके हृदयमें क्षमा, शांति, करुणा और समताके भाव परिपूर्ण सुशोभित थे।

(५) उस सभामण्डपमें यद्यपि सब ही प्रकारके प्राणी थे तिसपर भी भगवानकी दिव्य आत्माका तेज सर्वत्र इस प्रकार छाया हुआ था कि चहुं ओर शांति ही शांति विराज रही थी।

(६) प्रभुके उपदेशकी भाषा उस समयकी लोकभाषा अर्द्ध मागधी थी। परन्तु प्रभुके आत्मतेजके प्रभावसे वहां बैठे हुए सब ही प्राणी अपनी-अपनी भाषामें प्रभुके उपदेश द्वारा अदृश्य आनन्दका अनुभव कर रहे थे।

(७) उस व्याख्यान मण्डपकी रचना इतनी विचित्र थी कि उसके अन्दर किसी भी स्थानपर बैठा हुआ प्राणी प्रभुके प्रसन्न मुख मंडलको बिना किसी कठिनाईके देख सकता था।

ऐसे दिव्य अलौकिक समवरणकी रचनाके पश्चात तीर्थंकों नमस्कार कर, अपने केवल ज्ञान द्वारा जगतको शांति देनेवाला, सत्य संदेश पहुंचानेके हेतु प्रभु महावीर उच्च अन्तरिक्ष रत्नजड़ित सिंहासनपर विराजमान हुए।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उपदेश प्रदान

जैन शास्त्रोंमे यह बात विशेष रूपसे उपलब्ध है कि तीर्थंकर विना केवल ज्ञान अर्थात् सर्वज्ञता प्राप्त किये किसी प्रकारका धर्मोपदेश ही नहीं करते। यही कारण है कि जैन धर्म सर्वज्ञोंका धर्म कहलाता है जहां परस्पर विरोधाभासका कहीं आभासतक भी नहीं मिलता। केवल ज्ञानके पूर्व भगवान महावीरने भी कठोरसे कठोर कष्ट सहन करते हुए प्रायः मौन व्रतको धारण कर रक्खा था।

केवल ज्ञान प्राप्त करके जगतके जीवोंको दुखित देखकर भगवानने अब उस दिव्य सत्य-सन्देशको जगतमें प्रसारित करना चाहा जिससे प्राणी मात्रको पूर्ण सुख और शांति प्राप्त हो। उन्होंने लोक कल्याणके लिए समयानुसार अपने कार्यक्रमको बदलनेमें ही सच्ची विश्रांतिका अनुभव किया और परोपकारको ही जिसमें जीवमात्रोंका समावेश हो जाता है—ऐसे आत्मोपकार, परोपकार—प्रजातन्त्रवाद जिसमें जीवमात्रोंका समावेश हो जाता है—के समान अपनाया।

इस समय भारत भरमें हिंसा ही हिंसा का राज्य हो रहा था, स्वार्थी लोगोंने वेदों का अर्थ ही बदल दिया था, जहां देखो वहां धर्मके नाम पर यज्ञादि क्रियाओंमें लाखों जीवों का हनन हो रहा था, सारी पृथ्वी मूक प्राणियोंके रक्तसे दूषित हो रही थी, स्वार्थियों ने अपने मनोरथोंकी सिद्धिमें सैकड़ों राजा महाराओंको धर्म का नाम लेकर अधर्मकी ओर अग्रसर कर दिया था। सर्वत्र हाहाकार मचा हुआ था, कहीं अश्वमेध यज्ञोंमें सहस्रों घोड़ों का बलिदान

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

होता था, कहीं गोमेध यज्ञमें लाखों गौएं होम दी जाती थीं और कहीं-कहीं नरमेध यज्ञमें सैकड़ों मनुष्य व बच्चोंका बलिदान होता था, और इसे ही सच्चा धर्म बतलाया जाता था।

भगवान महावीरने अपने ज्ञान द्वारा एवं अमोघ शक्तिसे इस हृदय विदारक अवस्थाको समूल नष्ट करनेका उपदेश देना आरंभ किया। उन्होंने बतलाया कि खूनका दाग खूनसे ही धोनेसे साफ नहीं हो सकता, इसी प्रकार अधर्मको मिटानेके लिये अधर्म ही करनेसे धर्म कदापि नहीं हो सकता। उन्होंने दर्शाया कि सुख और शान्तिका मार्ग वही हो सकता है जिसे प्राणी मात्र चाहें। प्राणी मात्रको, चाहे छोटा हो चाहे बड़ा हो, अमीर हो या गरीब हो, पशु हो या पक्षी हो, कीडा हो पतंगा हो सबको अपनी-अपनी जान प्यारी है और सबही अपनी अपनी अवधितक जीवित रहना चाहते हैं। इसी अवस्थाको कायम करने और भारत व्यापी बनाने में भगवान महावीरने "अहिंसा परमो धर्मः" का दिव्य उपदेश अपनी गगन भेदी बुलंद आवाजसे देना आरंभ कर दिया। और जीवमात्रोंके लिये प्रजातंत्रवादकी उत्तम नींव डाली जो आजकल अंशतः मनुष्यमात्रतक सीमित रह गयी है। भगवानकी ऐसी अनोखी करुणा, क्षमता, दया और आत्माके अमर धन एवं सत्यके वितरण करनेकी चर्चाको देख, सुन और अनुभवकर जन समुदाय, उनकी शरणमें आकर अपने जीवनको 'सत्यं शिवम् सुन्दरं' के अलौकिक प्रकाशसे प्रकाशित करनेको, उमड़ पड़ा।

सर्वज्ञ भगवानने, बिना जाति भेद, ऊंच नीच, पशु-पक्षी सबही शरणागत प्राणियोंको सत्यका सत्स्वरूप बतलाया जिसका

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

एक ही उद्देश्य था और वह यह था कि दुनियांके घर घर और दर-दर सबही जगहोंमें सत्यका शुभ सन्देश पहुंचे। संसारके दुखित प्राणी सत्यकी सुशीतल छायामें परमानन्दका सदा उपभोग करें। कलह और क्लेश, दुःख और दर्द, बैर और विरोधका दुनियासे निर्वासन हो। अवनि तलपर अहिंसाका अखंड शासन सुदृढ़ बना रहे। दयाका अखंड स्रोत प्राणीमात्रके हृदयमें बहता रहे। घर-घरमें परोपकारकी प्रतिष्ठा हो। जगतमें सात्विक प्रेमका पसारा हो; और अन्तमें लोग एकमात्र आत्मज्योतिके सुन्दर दर्शन कर मोक्ष मार्गकी ओर अग्रसर होते चले जांय।

भगवानके इस सत्य-सन्देशका तत्कालीन मनुष्य समाजपर बड़ा असर पड़ा। उन्होंने अहिंसाके भिन्न-भिन्न स्वरूपोंका निरूपण कर जगतको समता रसका अमृत पान कराया। बस, इतना होते ही जन-समुदायमें राग-द्वेषकी भावनाएं मिटने लगीं। साम्य भाव प्रत्येक प्राणीके हृदयमें स्थान पाने लगा। अमानुषिक अत्याचारोंका प्रवाह वेगसे लोप होने लगा। यज्ञोंके नामपर लाखों पशुओंके रक्तसे पृथ्वीका रंजित होना एकदम रुक गया। जाति भेद गत घृणित रूढ़ियोंका प्रायः अन्त हो गया। समतावादका चारों ओर सुन्दर शासन प्रसारित हुआ। शान्तिका स्वागत घर-घर होने लगा। लोभवृत्ति और स्वार्थ-कामनाकी काया पलटी। जगतमें त्याग और तपस्याकी प्रतिष्ठा बढ़ी। लोगोंने एक नयी और चमत्कारपूर्ण सात्विक भावनाओंको लेकर प्राणीमात्रोंके एक नवीन प्रजातन्त्र युगमें पदार्पण किया।

भगवान महावीरने कोई नवीन बात नहीं बतलाई, परन्तु भूले हुए दुःखित प्राणियोंको पूर्व तीर्थंकरों द्वारा भाषित अहिंसा धर्मका

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ही तत्कालीन द्रव्य, काल, क्षेत्र और भावानुसार सत्य संदेश भिन्न भिन्न दृष्टि कोणोंसे समझाया। उन्होंने अपने आदर्श उदाहरणसे बतलाया कि घृणा ही सबसे अधिक त्याज्य है घृणा ही सर्व-नाशका कारण है। घृणाको नींव हिंसा है जो सर्वपापोंका मूल है। इसलिये किसीसे घृणा मत करो। संसारमें घृणित वह है जो घृणा करता है क्योंकि उसका हृदय घृणासे घृणित है और उसीके वशीभूत वह संसारमें दुःख क्लेश और अशान्तिकी बाढ़ ले आता है। चेतना आत्मा प्राणीमात्रमें वर्तमान है और वह सबही अन्तः करणोंमें एकसा प्रकाश करती है। इसलिये किसीको किसीके प्रति घृणा करनेका कोई अधिकार नहीं है।

भगवान का आदर्श सिद्धान्त क्षणिक नहीं था, वे परिणाम-दर्शी थे। उनकी धार्मिक भावनामें लोक कल्याणका हेतु था। जिसकी नींव केवल सत्य, विशुद्ध प्रेम, निःस्वार्थ भावना और अहिंसाके सुदृढ पायों पर रची हुई थी।

भगवान महावीरके सिद्धान्तमें आत्मज्ञान, अध्यात्मज्ञान, तत्त्वज्ञान, विज्ञान और स्याद्वाद का पूर्ण समावेश होनेके कारण ही उन्हें परिपूर्ण सफलता मिली और जैन धर्म पुनः पूर्णरूपसे विकसित होने लगा। बड़े बड़े राजा महाराजा एवं धुरंधर विद्वान वेदान्तके ज्ञाता भगवानके अहिंसारूपी झंडेके नीचे आ गये, और गोशालाका चलाया हुआ "आजीविक" और बुद्धका "बौद्ध धर्म" जो भगवान महावीर को केवल ज्ञान प्राप्त होने के पहले बहुत वेगसे प्रचलित हो चुके थे, "अहिंसा परमो धर्मः" का सिद्धान्त पालन करते हुए भी, आत्मज्ञान शून्य होनेके कारण शीघ्र उदय होकर अस्त हो गये या उनका रूपान्तर हो गया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परन्तु जैन धर्म की नींव अभेद किलेके सदृश्य सुदृढ़ होनेके कारण आजतक धर्मोंमें अपना उच्चासन गृहण किये हुए अपने सिद्धान्तका महत्व विश्वव्यापी बना रही है। यह जैन धर्म की अहिंसा और आत्मबलका सत्य विकास ही है जिसने संसार की पाशविक महान शक्तिका सामना महात्मा गांधीके नेतृत्वमें भारत वर्षमें किया और कर रहा है। जिसके आधार पर ही संसारकी सबही भारी शक्तियां "निःशस्त्री करण" के सिद्धान्तको अपनाके विश्व शान्ति फैलाना चाहती हैं। 'अहिंसा' आत्माका निज गुण होनेके कारण महान् शक्तिशाली शस्त्र है सत्यके आधार पर जिसका प्रभुत्व संसारमें कभी नष्ट नहीं हो सकता।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगवान महावीरके ग्यारह गणधर

अर्थात्

'प्रमुख-शिष्य'

अपापा नगरीके बाहर जब भगवानके समवसरणमें सहस्रों प्राणी अमृतमयी प्रभुकी वाणीका शांति रसपान कर रहे थे तब उस नगरीमें सोमिल नामक ब्राम्हणके यहां एक बहुत बड़े यज्ञकी तैयारी हो रही थी। उसमें भिन्न-भिन्न स्थानों एवं प्रदेशोंके बड़े-बड़े धुरन्धर विद्वान, आचार्य और पंडित आमन्त्रित किये गये थे। उनमेंसे मुख्य गोव्हर नामक वस्तीसे गौतम गोत्रीय वसु भूति के तीन पुत्र इन्द्रभूति, अग्निभूति और वायुभूति अपने पांच-पांच सौ शिष्योंके साथ उस यज्ञमें पधारे। वे अपने समयके विद्वानों में प्रकांड तेजस्वी और सर्वश्रेष्ठ गिने जाते थे। उनके बाद कोल्लाक गांवसे व्यक्त और सौधर्म्म नामक प्रचंड पंडित लोग वहां आये। उनके साथ उनके एक हजार शिष्य भी थे। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न स्थानोंसे मंडित और मौर्य अपने साढें तान सौ शिष्यों के साथ और अकंप, अचलभ्राता, मैतार्य और श्रीप्रभास अपने तीन तीन सौ शिष्योंके साथ उस यज्ञमें सम्मिलित हुए।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

यों तो वे ग्यारहों पंडित अपने समयके दिग्गज विद्वान थे और धार्मिक विद्याओंमें एवं अनेक भाषाओंमें सर्वांग अधिकार रखते थे। तब भी उनके हृदयमें धार्मिक विषयोंमें कोई न कोई शंका बनी रहती थी, जिसे वे, अपने पांडित्यमें धक्का लगनेके भयसे, किसीके सामने प्रगट नहीं कर सकते थे। इन्द्रभूतिके मन में 'जीव है या नहीं' यह संशय घुसा हुआ था; अग्निभूति के दिलमें 'कर्म कोई पदार्थ है या नहीं' यह चक्कर पड़ा हुआ था; वायुभूतिको 'यह शरीर ही जीव है या जीव कोई पृथक पदार्थ है' यह शंका थी; व्यक्तको 'जगत कोई वास्तविक पदार्थ है या शून्य है' यह भाव सता रहा था; सौधर्म्मका मन 'जीवके जन्मान्तरोंके रूपों में समता और विषमता' की उधेड़बुन कर रहा था; मंडित को 'मुक्ति और बंध है या नहीं' इसी बातकी पंचायत पड़ी थी, मौर्य देवों हीके अस्तित्वमें' शंकाशील थे; अकम्पको 'नरक गति है या नहीं' यह विचार बेचैन कर रहा था; अचलभ्रातको 'पुण्य और पाप' एवं मेतार्यको 'परलोकके अस्तित्व और आत्माकी स्वतन्त्रता' और श्री प्रभासको 'मुक्तिकी विद्यमानता' में नाना प्रकारके संकल्प विकल्प हो रहे थे। परन्तु उनमेंसे कोई भी अपनी शंकाओंका समाधान औरोंसे करवाना अपनी न्यूनता समझता था। वे सदा शंकाशील बने रहते थे मगर शंका मिटानेका कुछ भी उपाय नहीं करते थे। उनके सिवाय दिशा विदिशाओंसे और भी इतर पंडित लोग भी उस यज्ञमें सम्मिलित हुए थे। यज्ञ बहुत बड़ा था इसलिए वहां चारों ओरसे अपार भीड़ जमा हो रही थी।

एक ओर सोमिलके यहां यज्ञकी धूम हो रही थी। दूसरी ओर भगवानके समवसरणमें देवताओंका आगमन तेजीके साथ हो

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

रहा था। अपने-अपने स्वर्गोंसे देवता लोग उस समवसरणमें प्रभु का उपदेश सुननेके लिए आ रहे थे। पहले तो यह कौतुक देख इन्द्रभूति आदिको बहुत ही हर्ष हुआ। वे सोचने लगे कि देवताओंके विमान हमारे यज्ञकी ओर आ रहे हैं सचमुच हमारे मन्त्रोंमें बड़ी ही शक्ति है। परन्तु जब वे देवताओंके विमान सर्वज्ञ भगवान महावीरके समवसरणकी ओर जाने लगे तो उन पंडितोंका हर्ष विलीन हो गया। वे सोचने लगे कि यह कोई इन्द्रजाल तो नहीं है कि देवतागण कदाचित् भूलकर यज्ञ में आनेकी अपेक्षा कहीं अन्यत्र भटक रहे हैं। इस बातकी जब उन्होंने पूछताछ की तो उन्हें पता लगा कि यहां कोई महावीर नामका सर्वज्ञ आया हुआ है उसीके समवसरणमें ये देवता लोग जा रहे हैं। यह बात जानकर इन्द्रभूति आदि विद्वानोंको बड़ा क्रोध आया। वे सोचने लगे कि दुनियामें कोई भी हमसे अधिक विद्वान नहीं है, यह महावीर कहांका सर्वज्ञ है, यह तो अवश्य कोई ढोंगी मायाजाली है इसे चलकर सीधा करना चाहिए और उसके पाखंडकी पोल सबकी उपस्थितिमें खोलना चाहिए।

इस प्रकार क्रोधित हो वह इन्द्रभूति वहां से भगवानकी ओर चल पड़ा। वह उस समवसरणमें आया कि उसकी रचना देख चकित हो गया। फिर वह आगे बढ़ा और अपने पांच सौ शिष्य सहित बिना भगवानको सत्कार तथा विनय किये ही सभा मंडपमें भगवानके सन्मुख उद्दण्डतापूर्वक उपस्थित हुआ। ज्योंही वह भगवानके सन्मुख आया त्योंही सर्वज्ञ प्रभुने उसका नाम लेकर उसे उसके गोत्रीय शब्दोंमें सम्बोधित किया। फिर तो इन्द्रभूतिको कुछ अचंभा हुआ फिर भी उसने सोचा कि "मैं तो जगत्‌विख्यात

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हूं, मेरा नाम कौन नहीं जानता। मेरे प्रकाण्ड पांडित्यकी चर्चा तो चारों ओर फैल रही है कहीं इन्होंने भी मेरा नाम, गोत्र समवसरण में प्रवेश करते वक्त किसी से सुन लिया होगा। इनकी सर्वज्ञता तो मैं तब मानूं, जब ये मेरे मनोगत भावोंको अक्षरशः पूरे-पूरे बता दें।"

इतना विचार इन्द्रभूतिके मनमें आते ही भगवान बोले "पांडितराज! 'जीव है या नहीं' यह सवाल तुम्हें सता रहा है; वेदों की साधक और बाधक ऋचाओं को पढ़कर आपका मन संदेहसे भरा हुआ है। परन्तु आपने वेद वाक्योंको भली भांति समझा ही नहीं। चिन्ता दूर कीजिये और उन्हीं ऋचाओंका वास्तविक अर्थ समझकर अपने संदेहको मिटाइये।"

तदनन्तर सर्वज्ञ भगवानने उन्हीं ऋचाओंके अर्थकी विस्तारपूर्वक व्याख्या कर इन्द्रभूतिका सन्देह दूर किया। उन्होंने सिद्ध किया कि जो जानता है और देखता है वही जीव है और शरीर तो वस्त्रादिकी तरह केवल उपभोगकी वस्तु है। इसका पूर्ण विवरण जैन-शास्त्रोंमें उत्तम रीतिसे कल्पसूत्र और भगवती आदि सूत्रोंमें पाया जाता है। जिस शंकाके सिन्धुमें इन्द्रभूति गौतम वर्षोंसे गोते लगा रहा था, वह भगवानके सदोपदेशसे बातकी बातमें किनारे आ लगा। अब भगवान महावीरकी सर्वज्ञतामें उसे जरा भी संदेह न रहा, बल्कि उसके पांडित्यका अभिमान भी चूर-चूर हो गया। उसे वैराग्य उत्पन्न हो गया। फिर तो उसने भगवानको नम्रतापूर्वक नमन किया। और उनका शिष्य होकर दीक्षित होनेकी उत्कट अभिलाषा प्रकटकी। योग्य अधिकारी जान प्रभुने इन्द्रभूति

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

गौतमको उसके पांच सौ शिष्यों सहित दीक्षा देकर उसे अपना प्रथम शिष्य बनाया।

इन्द्रभूतिकी दीक्षाकी सूचना नगरमें बिजलीकी तरह फैल गई। यह सुन अग्निभूतिको भी क्रोध आया और वह अपने दिग्गज भाईको एक साधारण वैरागीकी मायाजालसे छुड़ानेके हेतु अपने पांचसौ शिष्यों सहित उस समवसरणमें आ पहुंचा। उस पर भी वही बीती जो इन्द्रभूतिके साथ हुई थी। उसे भी उसी प्रकार सम्बोधित कर भगवानने उसके मनका "कर्म कोई पदार्थ है कि नहीं" यह संशय निवारण किया। तब तो अग्निभूतिको भी भगवानकी सर्वज्ञता स्वीकार करनी पड़ी और वह भी अपने पांच-सौ शिष्योंके साथ दीक्षित हो भगवानका दूसरा शिष्य हो गया।

इस प्रकार वायुभूति आदि इतर आठ प्रकांड पंडित क्रमशः अपनी-अपनी शंकाओंका समाधान करनेके हेतु अपने शिष्यों सहित भगवानके समवसरणमें आये। सर्वज्ञ भगवान महावीरने उनकी सब शंकाएं स्याद्वाद सिद्धांतके अनुसार वेद ऋचाओं के सही-सही अर्थ द्वारा समाधान कर दी। तब तो उनकी प्रचुर विद्वत्ताका घमंड तापज्वरकी तरह उतर गया। वे अपने-अपने शिष्यों सहित जैन धर्ममें दीक्षित हो गये। जिसका विस्तारपूर्वक विवरण शास्त्रोंमें उपलब्ध है।

अब तो उक्त ग्यारहके ग्यारह प्रचंड पंडित अपने ४४०० शिष्यों सहित भगवान महावीरके प्रमुख शिष्य अर्थात् गणधर बन गये। तदनन्तर भगवानने भी इन्हीं शिष्यों द्वारा 'अहिंसा परमो धर्मः' का अमृतमयी अपूर्व शांतिदायक सत्य सिद्धान्त देश देशान्तरों में फैलाना आरंभ कर दिया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

चन्दनबाला और मेघ कुमार आदि की दीक्षा

जब भगवान को केवल ज्ञान प्राप्त हो गया और अपापा पुरीमें इन्द्रभूति, अग्निभूति आदि तेजस्वी पंडितोंने अपनी हार स्वीकार करके प्रभुकी शरण गही तब तो उनके अगाध आत्मबल तप और तेजकी महिमा दिशा विदिशाओंमें फैलते फैलते कोशाम्बी पहुंची जहां चन्दनबाला रहती थी।

चन्दनबालाने यह प्रतिज्ञा कर ही ली थी कि प्रभुको केवल ज्ञान होने पर दीक्षा गृहण करूंगी। तदनुसार वह भी अपनी कुछ सहेलियोंके साथ प्रभुके पास पहुंची और उनसे अपनेको दीक्षित कर लेनेकी विनम्र प्रार्थना की। प्रभुने अपने ज्ञानसे उसकी अन्तरात्माको पहिचान कर उसे दीक्षित कर लिया। उसके साथ अन्य महिलाओंने भी दीक्षा ग्रहण की। भगवानने चन्दनबालाको सबही साध्वियोंकी मुखिया, ऐसा पद प्रदान किया।

उस समय और भी नर नारियोंने श्रावक और श्राविकाओं का व्रत धारण किया। इस प्रकार साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप चतुर्विध संघकी स्थापना हुई। इसके बाद प्रभुके द्वारा गणधर भी उत्पाद, व्यय और ध्रुव, इस त्रिपदीके ज्ञानसे प्रतिबोधित किये गये। उसीके आधार पर फिर गणधरोंने 'द्वादशांगी' की उत्तम रचना की।

वहांसे विहारकर रास्तेमें कई स्थानों पर जगतके दुःखी जीवों को अपने अमृत उपदेश द्वारा शान्ति पहुंचाते हुए प्रभु एक दिन राजगृहमें पधारे। प्रभुके आगमनका संदेश वहां के राजा श्रेणिक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को मिलते ही उसने उनके दर्शन करनेकी तैयारी की। राजपुत्रोंने भी यह संदेश सुना। वे भी प्रभुके दर्शन करनेको राजा श्रेणिकके साथ पधारे। भगवानके समीप आकर उन्होंने बड़ी श्रद्धा, भक्ति और विनय सहित प्रभुकी बन्दना की। फिर प्रभुने उन्हें सम्यक्त्व का तत्व समझाया; जिसे सुनकर राजकुमार अभयने तो उसी समय श्रावक धर्म अंगीकार कर लिया और मेघ कुमार, जो राजा का जेष्ठ पुत्र था, वैराग्य भावसे परिप्लावित हो गया।

घर पर आकर मेघ कुमार अपने माता पितासे बोला 'मेरा मन अब संसारमें नहीं लगता, संसार तो मुझे बहुत संतापकारक प्रतीत होता है, मुझे आज्ञा दीजिये तो मैं भगवान महावीरकी शरण जाकर, दीक्षा गृहण कर, आत्मा संशोधन करूं।' राजाको यह बात सुनकर बहुत अचंभा हुआ कि भगवानके एक ही दिनके उपदेशने राजपुत्रके मनमें वैराग्यका घर कर लिया। फिर तो राजा ने राजकुमारको बहुतेरा समझाया। उन्होंने एक दिनका राज्य उसे देकर, उसकी महिमा एवं सुखका प्रलोभन दिखाकर उसके चित्त की वृत्तियोंको संसार-सुखकी ओर खींचनेके कई प्रयास किये; परन्तु वे सब निष्फल हुए। मेघ कुमारकी वैराग्य भावना ज्यों की त्यों सुदृढ़ बनी रही। तब तो राजाको उसे दीक्षा गृहण करनेकी अनुमति देनी पड़ी। तत्पश्चात् मेघ कुमार प्रभुके पास आये और अपने आन्तरिक विचार उनके सन्मुख प्रगट किये। भगवानने भी उसके परिणामोंकी रूप रेखा परखकर उसे दीक्षा दे दी।

रात्रिमें नव दीक्षित मुनि मेघकुमारको उस स्थानपर सोना पड़ा, जहांसे उनके पूर्व दीक्षित साधुओंके आने-जानेका मार्ग था। मुनियोंके बाहर जाने आनेमें अनेक बार मेघ मुनिको उनके पैरों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

के प्रहार सहन करने पड़े। बस एक ही रातकी इस वेदनाने मेघ मुनिके विचारोंमें परिवर्तन कर दिया। उनका मन संयमसे हट गया। वे सोचने लगे कि 'प्रातःकाल ही प्रभुके सन्मुख जाकर मैं इस व्रतको त्याग दूंगा।' प्रातःकाल होते ही मेघमुनि भगवानके पास आये और रात्रिका सब वृतांत सुनाकर संयम व्रत छोड़ देने की अपनी इच्छा प्रकट की। तब प्रभु बोले 'देवानुप्रिय रात्रिकी इस छोटी सी वेदनासे तुम इतने व्याकुल हो गये; तुम अपने पूर्व भवकी बात यात याद करो। 'तुमने पूर्व भवमें क्षणिक उत्तम क्षमा एवं दयाके कारण उच्च गतिका बांध बांध लिया था। यदि यह बात तुम्हें स्मरण हो जावे तो तुम संयमव्रत छोड़नेके बदले संसारको संयमकी ओर खोचनमें लग जाओगे' तब तो मेघ मुनि हाथ जोड़कर भगवानसे अपने अपूर्व भवकी बात बताने के लिए प्रार्थना की।

मेघ मुनिकी यह भावना देख प्रभु बोले 'भव्य मेघकुमार! पूर्व भवमें तू एक हाथी था। तेरा नाम मेरुप्रभ था। तू विंध्याचल के बनप्रदेशमें हाथिनियोंका यूथपति बनकर रहता था। एक दिन उस बनमें भयंकर आग लगी, तब तूने अपनी कुल हाथिनियोंको साथ लेकर उसी बनके एक जलाशयके निकट लाकर उन्हें विश्राम दिया। अग्निकी ज्वालासे दूसरे बन के प्राणी भी भागकर तेरे विश्राम स्थानमें घुस आये। उस समय पड़ोसकी आंचके कारण तेरे बदनमें कुछ खुजली चली, तब अपने बदनको खुजलाने के लिए तूने अपना एक पांव ऊपर उठाया, इतनेमें ही एक भयातुर खरगोश तेरे उस उठाये हुए पैरके नीचे आकर बैठ गया। यह सोचकर कि 'अब यदि पांव नीचे रखा तो यह प्राणी दबकर मर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जायगा, तूने अपना वह पांव दयाके कारण पूरे तीन दिनतक ऊपर ही उठा रखा। तीसरे दिन जब अग्नि शांत पड़ी और सब प्राणी वहांसे चले गये, तो अपनी प्यास बुझानेके हेतु जलाशयके पास जानेके कारण जमीनपर टिका नहीं और तू धड़ामसे गिरकर उसी समय मर गया। उस तीन ही दिनकी पवित्र दयाके कारण मरकर इस भवमें तू मनुष्य रूपमें आकर राजपुत्र बना। अतः अब इस संयम व्रतको धारणकर उसे छोड़ना कायरपन है अब तो तुझे एक वीरकी भांति कर्मोंपर विजय प्राप्त करना चाहिए।

भगवानके इस अमृतमय उपदेशको सुन मेघमुनिको जाति स्मरण ज्ञान पैदा हो गया। उसने अपने पूर्व भव भी सारी बातें जानली। तब तो मेघमुनिका विचलित मन पुनः संयमव्रतमें सुदृढ़ हो गया और उसी दिनसे वे कठोरसे कठोर तपकी आराधना करने लगे।

इसी प्रकार भगवानने गृहस्थी अवस्थाके जामाता जामालि एवं उनकी पुत्री प्रिय दर्शनाजी ने भी भगवानके लोक हितकारक उपदेशको सुनकर कुण्डग्राममें दीक्षा लेली। इनमेंसे मिथ्यात्व का उदय होने के कारण जामालितो मिथ्यात्वी ही बने रहे; परन्तु प्रिय दर्शनाजीने प्रभुकी शरण गहकर उत्तम साध्वी जीवन बिताना आरंभ कर दिया।

ग्रहस्थ अर्थात् श्रावक धर्म

जैन शास्त्रोंके पठनसे ऐसा प्रतीत होता है कि आजसे पच्चीस सौ वर्ष पूर्व यह भारतभूमि स्वर्णमयीभूमि थी। क्योंकि प्रभु

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

महावीरने जब गृहस्थ धर्मका उपदेश दिया तब जिन-जिन गृहस्थियों ने श्रावक धर्म अंगीकार किया वे सबके सब प्रायः करोड़पति ही थे। जिनकी करोड़पतिकी गणना चांदी के रुपयों से नहीं, वरन् सोनैया अर्थात् सोनेकी मोहरोंसे होती थी।

वाणिज्य गांवमें जब प्रभु पधारे तो वहां आनंन्द नामका एक सेठ रहता था। वह बारह करोड़ सोनैयाका स्वामी था। भगवानके सदोपदेशसे उसने श्रावक धर्म स्वीकार किया और उसी दिनसे अहिंसाका सच्चा उपासक बन गया।

भगवानका अहिंसाका उपदेश आत्मशुद्धिका उपदेश था। विना अहिंसाके आत्मशुद्धि हो ही नहीं सकती। भगवान महावीरने आत्मशुद्धिके लिए पृथक-पृथक तरीके बताये हैं। ज्यों-ज्यों प्राणी स्वार्थ और तृष्णाको तजता है त्यों-त्यों वह आत्मकल्याणकी ओर अग्रसर होता जाता है। और जब वह पूर्ण निर्विकार रागद्वेष रहित हो जाता है तब ही उसकी पूर्ण विशुद्धि हो जाती है। इसी स्वार्थ और तृष्णाको नष्ट करनेके लिए प्रभु महावीरने पांच बातें बताई हैं। अर्थात अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रम्हचर्य और अपरिग्रह।

इन अहिंसादि पांच व्रतोंके उच्च आदर्शको प्रत्येक व्यक्ति पूर्णरूपेण पालन नहीं कर सकता इसलिए प्रभु महावीरने इसे अणुव्रत और महाव्रत इन दो भागोंमें बांट दिया। इन दो विभागोंमें बंट जानेसे इनमें व्यवहारिकता आ गई; तथा साधारण शक्ति वालोंके लिए भी आत्मकल्याणका मार्ग खुल गया। अणुव्रत का प्रवृत्ति मार्ग भी निवृत्ति मार्गपर ले जानेवाला बन गया; अतः अणु-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

व्रतकी प्रवृत्ति आत्म-कल्याणमें बाधक न बनकर साधक बन गई। प्रवृत्ति मार्गमें निवृत्ति मार्गके त्याग, तप, संयमादि का समावेश उचित रीतिसे हो जानेके कारण प्रवृत्ति संसारमें लिप्त हो जानेके वातावरणसे बच गयी।

तदनुसार भगवान महावीरने समाजको, गृहस्थ और मुनि, इन दो भागों में विभक्त किया। गृहस्थके लिये अणुव्रतों का तथा मुनियोंको महाव्रत पालन करने का आदेश दिया। व्रत दोनों के लिये समान हैं; अन्तर केवल इतना ही है कि उन्होंने गृहस्थ के लिये वेही पांच व्रत स्थूल रूप से अपनी शक्ति और परिस्थितिके अनुसार द्रव्य, काल, भाव, क्षेत्र को लक्षमें रखकर पुरुषार्थ सहित पालन करने का आदेश दिया तथा मुनिके लिये वे ही पांच व्रत पूर्ण रूपसे पालन करने का उपदेश दिया। इस प्रकार मुनि धर्म के साथ ही साथ प्रभुने श्रावक धर्म का भी उपदेश देना आरंभ किया। आनन्द श्रावकके पश्चात् भगवानने चम्पानगरीमें कामदेवजी श्रावकको श्रावक धर्मका महत्व समझाया। उनके पास अठारह करोड़ सोनैयोंकी सम्पति थी। प्रभुके सदोपदेशसे उन्होंने सब प्रकारके प्रमादोंका त्याग कर दिया; और प्रभुके उत्तम श्रावक बन गये। वाणारसी और अलम्बिकामें भगवानके उपदेशसे भिन्न-भिन्न बस्तियोंमें चुलणीपियाजी, सुरादेवजी चूलशतकादिने श्रावकों के उत्तम बारह धर्मोंको धारण किया। फिर भगवान कपिलपुर पधारे। वहां कुंडकौलिकको धर्मोपदेश दिया। यह कुण्डकौलिक ग्यारह करोड़ सौनैयोंका स्वामी था और इनके पास साठ हजार गायें भी थीं। भगवानके उपदेशका इन पर इतना प्रभाव पड़ा कि वे उसी दिनसे श्रावक धर्म पालते हुए जप, तप, संयमादि की उत्तम

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

क्रियाओंमें संलग्न रहने लगे। एक समय जब कुण्डकौलिक सामायिक कर रहे थे तब इनके दृढ़ निश्चय की परीक्षा करने के लिये एक देव आकर बोला "हे कुण्डकौलिक! तू गौशाला प्ररूपित नियतिवादके सिद्धान्त पर क्यों नहीं चलता जो होने वाला है वह तो होकर ही रहेगा; व्यर्थके क्रिया काण्डों द्वारा कष्ट उठानेसे क्या फायदा है इत्यादि' तब तो कुण्डकौलिकजीने कहा "देव! तेरा कहना कदाचित् ठीक भी हो, परन्तु जो बात प्रत्यक्ष है उसे प्रमाण की क्या जरूरत है, यम और नियमादिमें यदि कुछ नहीं है तो तुझे यह देव ऋद्धि कैसे प्राप्त हुई।" तब देव बोला "मुझे तो विना ही यम नियमादिके देवगति प्राप्त हुई है।" कुण्डकौलिकजीने उत्तर दिया कि "यदि ऐसा ही है तो जगतके अनेकों जीव जो कुछ भी धर्म-कर्म नहीं करते वे सबके सब देव क्यों नहीं बन गये।" इस पर देव चुप होकर वहां से चला गया और कुण्डकौलिक अपने धर्म कर्ममें और दृढ़ बन गया।

इस प्रकार भगवान महावीरने अनेक पुरुषोंको श्रावक धर्मका उपदेश दिया और उन्हें मुक्तिके मार्गपर अग्रसर कर दिया। इन्हीं श्रावकों द्वारा बनवाये हुए चित्ताकर्षक विशाल मन्दिर एवं पुरातन पाठगृह और बिंबादि अनेक स्थानोंमें आज भी भारतवर्षमें वर्तमान हैं और जिनका विस्तारपूर्वक वर्णन स्थान-स्थान पर जैनशास्त्रों में उपलब्ध है।

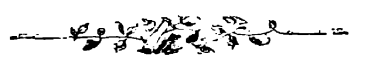

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पुरुषार्थ और पराक्रम

कुम्भकार सद्दाल पुत्रका संशय छेदन

स्थान-स्थान विचरते हुए एक दिन प्रभु पोलासपुर पधारे। वहां सद्दालपुत्र नामका कुम्हार रहता था। वह गौशालाका कट्टर अनुयायी था। वह अपने गुरुके 'नियतिवाद' के सिद्धांतोंको इस प्रकार अपना चुका था कि बड़ेसे बड़े विद्वान उसका सामना नहीं करते थे। उसका यह सिद्धांत था कि 'संसारमें जो वस्तु अथवा होनहार होनेवाली होती है वह अवश्य होकर रहती है; उसमें किसी बातका विचार विनिमय करनेकी एवं उपाय रचनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं।'

एक दिन प्रभु अपने उपदेशमें श्रोताओंको पुरुषार्थोंकी महिमा एवं समयानुकूल पराक्रमका उपदेश एवं आत्मरक्षा हेतु समझा रहे थे। उस समय सद्दाल पुत्र भी वहां बैठा हुआ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ एवं आत्मरक्षाके हेतु पराक्रम, बल, और वीर्यका विवेचन सुन रहा था। परन्तु उसके मनमें गौशाला का नियतिवाद ही घर कर बैठा था। उसे प्रभुकी सर्वज्ञतापर संदेह था तिसपर भी भगवानके प्रति आदर सत्कारकी भावना उसके मनमें जागृत हो रही थी। उसीसे प्रेरित हो, व्याख्यान खतम होने के बाद उसने प्रभुके चरणोंमें नमन किया और प्रार्थना की कि 'भगवन्! इसी नगरके बाहर मेरी दूकानें हैं। अच्छा हो कि मेरी शंका निवारण करनेके लिए कुछ कालतक आप वहां ठहरें।' भगवानने सद्दालकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और वहीं पधार गये।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

एक दिन जब सद्दालके नौकर उसके बनाये हुए मिट्टीके बरतनों को धूपमें सुखा रहे थे, तब प्रभुने पूछा "सद्दाल ! कहो ये बर्तन किस प्रकार हैं ?" सद्दालने उत्तर दिया, "पहले मिट्टी लाया, उसमें पानी और राख मिलाई, फिर उसकी लुगदी चाक पर चढ़ाकर इच्छानुकूल बर्तन बना लिये गये।" इसपर प्रभुने फिर पूछा, "सद्दाल ! इनके बनानेमें बल, वीर्य, पुरुषार्थ, परिश्रमादि लगे या नहीं; या ये योंहीं बनकर तैयार हो गये।" सद्दाल बोला "नहीं प्रभु ! ये योंही बनकर तैयार हो गये; यही तो मेरे गुरुका सिद्धान्त है। जो वस्तु भावीके बल जैसी भी वह होती है, होकर रहती है। उसमें किसी भी प्रकारके क्रियाकांड और परिश्रमका अवलम्बन नहीं माना जाता।" इसपर प्रभुने उससे कहा "क्यों सद्दाल। यदि तेरे इन बर्तनों को कोई चोर उठा ले जावे; या इन्हें कोई तोड़-फोड़ डाले; अथवा कोई आकर तेरी स्त्रीका सतीत्व हरना चाहे तो इनमेंसे प्रत्येक व्यक्तिके साथ तू किस प्रकार बर्ताव करेगा ?" सद्दालने कहा "भगवान् बर्तावकी बात ही क्या ? उसे तो लात, घूंसे थप्पड़ोंसे सीधा करूंगा और बने तो जिन्दा भी न छोड़ूंगा।" प्रभु बोले "सद्दाल ! विचार कर बोल। तू स्वयं अपने सिद्धान्तों की हत्या न कर। तेरे सिद्धान्तके अनुसार तो जो होने वाला होता है वह तो होकर ही रहता है। बर्तनोंका चुराना, तोड़ना फोड़ना, पत्नीके पातिव्रत धर्म को हानि पहुंचाना इत्यादि, विना किसी प्रकारके उत्थान बल, वीर्य, पुरुषार्थके तेरे मतानुसार होने वाला है वह तो होकर ही रहेगा। तुझे उन्हें रोकनेके लिये लात, घूंसे और जान लेनेकी आवश्यकता ही क्या है।" प्रभुकी इस वाणीको सुन सद्दालका भ्रम दूर हो गया। उसने अपने सिद्धान्तका खोखलापन जान लिया। वह प्रभुके चरणोंमें आ गिरा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और बोला "सर्वज्ञ। आपतो घट-घटकी जानते हैं। आपका स्याद्वाद सिद्धान्त मैं आजतक सुनता ही था अब तो उसपर मेरी पूर्ण श्रद्धा हो गई है। मुझे भी अपना शिष्य बनाकर स्याद् वाद के सिद्धान्तको मेरे हृदय में उतारिये। और आपकी शरणागति प्रदान कीजिये।" इसपर भगवानने उसे स्याद्वद धर्म के सत् सिद्धान्तोंका महत्व समझाया और उसे श्रावक धर्मकी दीक्षा देकर वहांसे गमन कर दिया। वहांसे राजगृहमें पधारकर चौबीस करोड़ स्वर्ण मुद्राके धनी महाशतक और उनकी पत्नी रेवतीको भी श्रावक धर्म के बारह व्रतों से विभूषित किया।

राजर्षि प्रसन्नचन्द्र

मुनि एवं गृहस्थ धर्मका सुन्दर उपदेश देते हुए वो स्थान-स्थानपर पुरुषार्थ और पराक्रमको सुन्दर महिमाका प्ररूपण करते हुए अनुक्रमसे विहार करते करते प्रभु महावीर पोतनपुरकी ओर जा निकले। उस समय वहां राजा प्रसन्नचन्द्र राज्य करता था। ज्यों ही प्रभु उसके नगरमे पधारे तो उस नगरके बाहर मनोरम नामक उद्यानमें देवताओंने समवसरणकी रचना की। वहां का राजा प्रसन्नचन्द्र उसी समय प्रभुकी वंदना करने आया। प्रभुकी देशना सुन उसको उसी समय वैराग्य उत्पन्न हो गया। वह अपने घर आया और राजकाजका भार अपने लड़केको सौंप, उसे मंत्रि-ओंके हवाले करके, प्रभुके पास आकर दीक्षा ग्रहण कर ली। तत्पश्चात् राजर्षि प्रसन्नचन्द्र भगवानके साथ–साथ विहार करने लगे।

कुछ समय पश्चात भगवान महावीर राजगृह नगरीमें पधारे। यह समाचार सुन हर्षायमान हो राजा श्रेणिक सह कुटुम्ब प्रभुकी वन्दना करनेको रवाना हुआ। उसकी सेनाके अग्रगामी सुमुख

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और दुर्मुख दो मिथ्यादृष्टि सेनापति आपसमें बातचीत करते हुए आगे-आग चल रहे थे। मार्गमें उन्होंने प्रसन्नचन्द्र मुनिको एक पैर पर खड़े और ऊंचे हाथ किये हुए; आतापना करते हुए देखा। उन्हें देखकर सुमुख बोला; 'ऐसी कठिन तपस्या करनेवालेके लिए स्वर्ग और मोक्ष कुछ भी दुर्लभ नहीं है।' यह सुनकर दुर्मुख बोला, 'अरे यह तो पोतनपुरका राजा प्रसन्नचन्द्र है। इसने अपने छोटे से लड़केको अपना बड़ा राज्य देकर कितनी विपत्तिमें डाल दिया है। उसके मन्त्री चम्पानगरीके राजा दधिवाहनसे जा मिले हैं और उन्होंने उसका राज्य छुड़ा लेनेके लिए उसपर चढ़ाई कर दी है। इसी प्रकार इसकी रानियां भी राज्य छोड़कर चली गई हैं। यह कोई धर्म है।' इन वचनोंने प्रसन्नचन्द्रके ध्यानको विचलित कर दिया और वे सोचने लगे 'अरे मेरे उन अकृतज्ञ मंत्रियोंको बारम्बार धिक्कार है। यदि इस समय मैं वहां उपस्थित होता तो उन्हें इस विश्वासघातका फल चखाता।' ऐसे संकल्प विकल्पोंसे व्याकुल होकर प्रसन्नचन्द्र मुनि अपने मुनिव्रतको भूल गये और अपने को राजा समझकर मन ही मन मंत्रियोंके साथ युद्ध करने लगे।

इतने ही में राजा श्रेणिककी सवारी वहां आ पहुंची और उसने प्रसन्नचन्द्र मुनिकी विनयपूर्वक वन्दना की। वहांसे चलकर वह वीर प्रभुके समीप आया और दर्शन, वंदनाकर विनय सहित उसने प्रभुसे पूछा, 'हे प्रभु! इस प्रकार उग्र अवस्थामें यदि मुनि प्रसन्नचन्द्रकी मृत्यु हो जावे तो उन्हें कौन सी गति प्राप्त होगी? प्रभुने उत्तर दिया 'कि वे सातवें नरकमें जायंगे।' यह सुनकर राजा श्रेणिक बड़े विचारमें पड़ गये। क्योंकि राजा श्रेणिकने यह सुना था कि मुनि कभी नर्कमें जाते ही नहीं। अतएव उसने सोचा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कि कहीं उसके सुननेमें फरक न पड़ गया हो उसने फिरसे पूछा 'भगवन् यदि मुनि प्रसन्नचन्द्र इस समय मृत्यु पा जाय तो कौन सी गतिमें जायेंगे ?' प्रभुने कहा कि—'अब वे सर्वार्थ सिद्धि विमान में जायेंगे।' राजा श्रेणिक अब तो चक्करमें पड़ गये। उन्होंने पूछा भगवन् ! आपने एक ही क्षणके अन्तरपर दो बातें एकदूसरी से विपरीत कहीं इसका कारण क्या है। मेरे इस संशयको मेटिये।

तब प्रभुने राजाकी उत्कंठा देख उसे यों कहा—श्रेणिक ! ध्यानके भेदमें प्रसन्नचन्द्र मुनि की अवस्था दो प्रकार की हो गई। पहिले दुर्मुखके वचनोंसे प्रसन्नमुनि अत्यन्त क्रोधित हो अपने मंत्रियोंसे मन ही मन युद्ध कर रहे थे; उसी समय तुमने उनकी वंदनाकी थी; और आकर मुझसे प्रश्न पूछा था। उस समय उनकी स्थिति नरकगतिके योग्य हो रही थी। उसके पश्चात् उन्होंने मनमें विचार कि अब तो मेरे सब शस्त्र खूट गये, इसलिये अब मैं शिरस्त्राणसे ही शत्रुओंका नाश करूंगा। ऐसा सोचकर उन्होंने अपना हाथ शिर पर फेरा। वहां अपने लोच किये हुए चिकने शिरको देख, उन्हें तत्काल अपने मुनिव्रतका स्मरण हो आया जिससे उन्हें अपने कियेका बहुत पश्चाताप हुआ। अपने इस कृत्यकी आलोचनाकर वे फिर शुक्ल ध्यानमें मग्न हो गये। उसी समय तुमने पुनः दूसरा प्रश्न किया। और उसी कारण तुम्हारे दूसरे प्रश्नका उत्तर दूसरा दिया गया।

इस प्रकार श्रेणिक और सर्वज्ञ भगवानकी बात चीत हो ही रही थी कि इतनेमें ही प्रसन्नचन्द्र मुनिके समीप देव दुन्दुभि वगैरः की गगनभेदी आवाज सुनाई देने लगी। उसे सुनकर श्रेणिकने पूछा-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

'स्वामी ! यह क्या हुआ ।' प्रभुने कहा—'ध्यानस्थ मुनि प्रसन्न-चन्द्रको इसी क्षण केवल ज्ञानकी प्राप्ति हुई है । देवता लोग उसी की खुशी मना रहे हैं ।'

सत्याग्रही सेठ सुदर्शन और अर्जुन माली

कई स्थानोंपर विचरते हुए एक बार फिर भगवान राजगृहीमें पधारे । भगवानके पधारनेकी सूचना मिलते ही सारा नगर आनन्द से उमड़ उठा । उस नगरीके सुदर्शन सेठकी इच्छा भी प्रभुके दर्शनार्थ जागृत हुई । उनका मन भगवानके प्रति प्रेम और भक्ति से भर गया । वे तुरन्त ही अपने माता-पिताके पास आये और प्रभु के दर्शनके लिए जानेकी आज्ञा मांगी । माता-पिताने उनकी विनती अस्वीकार कर दी । वे बोले—'बेटा ! अर्जुन मालीके शरीरमें एक असुर प्रवेश कर गया है । वह गांवके बाहर घूमता फिरता है और प्रतिदिन छै पुरुष और एक स्त्रीका प्राण अपहरण करता है । यही कारण है कि राजाने भी अकेले शहरके बाहर जानेकी मनाई कर दी है । इसलिए तुम यहींसे प्रभुकी वन्दना कर लो । वे सर्वज्ञ हैं तुम्हारी भाव भक्ति और वन्दनाको वे अवश्य स्वीकार कर लेंगे ।' परन्तु सत्य और प्रेमपर डटा हुआ मनुष्य ऐसी भीरुताकी बात ही कैसे सुन सकता है । सेठ सुदर्शन तो अहिंसा, सत्य, प्रेम और भक्तिसे सने हुए थे, वे अपने हृदयमें प्रभु-भक्तिको स्थान दे चुके थे । भयके लिए उनके साहसी हृदयमें जगह ही न थी । सत्य, भक्ति को लेकर मस्त-प्रभु चरणोंके दर्शनार्थ पिताकी आज्ञा लेकर सेठ सुदर्शन भगवानकी ओर चल पड़े । वे मन ही मन सोचने लगे कि सत्यकी महिमा और आत्मशक्तिके आगे शारीरिक राक्षसी शक्ति

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

की हस्ती ही क्या है जो अविनाशी आत्मापर घात पहुंचा सके। अगर भगवानके प्रति मेरी सच्ची भक्ति है तो अर्जुन माली मेरा बिगाड़ ही क्या सकता है क्योंकि सत्यकी तो सदैव विजय होती है। इस प्रकार विचार करते हुए सेठ सुदर्शन गांवके बाहर आ गये। थोड़ी देरके बाद अर्जुन मालीकी दृष्टि सेठपर पड़ी। वह अपना मुग्दर लेकर शेरकी तरह लपकता हुआ वहां आ पहुंचा। अर्जुनकी इस लपकसे सेठ तिलमात्र भी भयभीत न हुए, अपितु प्रभुका ध्यान करते हुए परम शांति और प्रसन्नताके साथ जमीनपर बैठ गये। अर्जुनने पास आते ही मुग्दर उठाया और सुदर्शनको मारना चाहा। ज्यों ही उसने अपना मुग्दर सिरपर उठाया त्योंही उसके हाथ वहींके वहीं रह गये। बहुतेरा प्रयत्न करनेपर भी उसके हाथ नीचे न आ सके। यह देखकर अपनी शक्तिपर उसे बड़ा ही क्रोध आया। लज्जाके मारे वह इधर-उधर झुंझलाने लगा और टकटकी लगाकर सुदर्शनजी की ओर देखने लगा। अन्तमें जब अर्जुनने अपने मन ही मन हर प्रकारसे हार मान ली तबतो उसके शरीरमें जो असुर गत छै महीनोंसे घुसा हुआ था छोड़कर भाग गया। इसके बाद अर्जुन अचेत हो धरतीपर गिर पड़ा। सेठ सुदर्शनके सत्याग्रहकी पूर्ण विजय हुई।

थोड़ी देर बाद जब अर्जुनको चेत हुआ तब तो उसने बड़ी नम्रतासे सुदर्शनजीसे पूछा–'भाई! आप कौन हैं? कहां रहते हैं और कहां जा रहे हैं?' सुदर्शनजीने कहा–'भाई! मेरा नाम सुदर्शन है; मैं इसी गांवमें रहता हूं और श्रमण भगवान महावीर के दर्शन तथा वन्दनाको जा रहा हूं।' यह सुन अर्जुनका मन भी भगवानके दर्शन, वन्दनादिके लिये अकुलाया। वह बोला–'भाई!

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सुदर्शन ! मैं तो जातिका माली हूं; मेरी भी इच्छा भगवानके दर्शन करने की है; उनके उपदेश सुनकर मैं अपना जन्म सफल करना चाहता हूं। आपके साथ चलकर क्या भगवान तक मेरी भी पहुंच सम्भव है ?' इसपर सुदर्शनजी बोले–'निस्सन्देह ! तुम एक बार क्या, सौ बार भगवान की शरणमें परम हर्षके साथ जा सकते हो। जाति-पाति का वहां कोई भी भेद नहीं है। उनके शिष्य और शरणागत होनेमें देश, काल और पात्र जरा भी बाधक नहीं बनते। तुम अवश्यमेव मेरे साथ वहां चल सकते हो।'

यह सुनकर हर्षायमान हो अर्जुन सेठ सुदर्शनके साथ भगवानके पास जाने को उठ खड़ा हुआ। वे दोनों भगवानके पास आये। विधिवत् वन्दन कर वे भगवानके सामने बैठ गये। परम सुन्दर, जगत हितकारी भगवानका उपदेश सुनकर सुदर्शनजी तो अपने घर को आगये और अर्जुन माली भगवानका शिष्य बनकर वहीं रहने लगा।

अब तो वह अर्जुन पहले का नर-संहारक अर्जुन न रहा। भगवानके उपदेशामृतसे उसने बेले-बेले की तपस्या आरंभ कर दी। अर्थात् दो-दो दिन अनशन और एक दिन भोजन करने लगा। जिस दिन अर्जुन पारणे के लिये भोजन सामग्री उस गांवमें लेने को जाता तो गांवके लोग उसे पूर्ववत् हिंसक समझकर नाना प्रकारकी यातनाएं देते और कभी-कभी तो यहां तक नौबत आजाती कि वहांसे उसे बिना भोजन ही लौट आना पड़ता था। उन सारी यातनाओं को अर्जुन मुनि हंस हंस कर सहते और कभी रोष एवं क्रोध न करते। पूर्वकृत कर्मों का फल तो भोगना ही पड़ेगा ऐसा समझकर अर्जुन मुनि अपने कर्जे को चुकाते। यों अर्जुन मुनि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

राग द्वेष रहित होकर जो कुछ मिलता उसीमें संतोष मानते हुए अपने कर्मोंकी निर्जरा करते रहते थे। इस प्रकार सन्तोष, क्षमा, अहिंसा, अमान और अक्रोधादि सत्भावनासे युक्त छै माह की तपस्या कर अर्जुन मुनि सत्संग द्वारा भव सागर पार कर गये।

पश्चात् इसी राजगृहमें कासव, वीर, और मेघ नामक व्यक्ति भगवानकी शरणमें आये और दीक्षा गृहणकरली। तदनन्तर काकन्दी निवासी क्षेम और धतिधर, साकेत ग्रामके कैलाश और हरिचन्दन, श्रावस्तिके श्रनणभद्र और सुप्रतिष्ट तथा सुदर्शन आदि गाथापतियोंने भगवानसे क्रमशः दीक्षा धारण की, और जप तप करके अन्तमें इन सबहीने मुक्ति मार्ग सम्पादन कर लिया।

एवन्तकुमार

पोलासपुरके राजा विक्रमका पुत्र, एवन्तकुमार, एक समय कुछ लड़कोंके साथ खेल रहा था। उस समय उस नगरीमें पधारे हुए भगवान महावीरके साथ गौतम स्वामी भी थे। गौतमस्वामी अपने बेलेके पारणेके हेतु भगवानकी आज्ञा लेकर अहारके लिए बस्तीमें पधारे। खेलते हुए बालक एवन्तकुमारने मुनिको इधर-उधर जाता देख उनसे पूछा कि 'आप कौन हैं? इधर उधर क्यों फिर रहे हैं?' गौतम स्वामीने उत्तर दिया 'हम निर्ग्रन्थ साधु हैं और अनैमित्तिक अहार पानीकी खोजमें घूम रहे हैं।' यह सुनकर राजकुमारने गौतम स्वामीकी अंगुली पकड़कर अपने राजमहल में ले आया और अनैमित्तिक अहार पानी उन्हें बहरा दिया। इसपर राजकुमारकी माता बहुत प्रसन्न हुई और अपने तथा राजाके भाग्य

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को बारम्बार सराहने लगी। जब गौतम स्वामी वापस जाने लगे तो राजकुमारने उनके ठहरनेका पता पूछा। गौतम स्वामी बोले 'नगरके बाहर जहां मेरे धर्म गुरू भगवान महावीर ठहरे हुए हैं उन्हींके साथ मैं भी हूं।' तब तो राजकुमारने भी प्रभुके दर्शन करनेकी इच्छा प्रकट की और गौतम स्वामीके साथ चल पड़े। भगवानके पास पहुंचकर राजकुमारने बड़े प्रेम और भक्तिपूर्वक प्रभु की वंदना की और कुछ धर्म उपदेश सुननेके लिए वे उनके सम्मुख बैठ गये।

प्रभुकी दिव्य वाणीका उनके ऊपर इतना प्रभाव पड़ा कि उनका मन वैराग्यसे भर गया। वे दीक्षाव्रत धारण करनेके लिए माता पिताकी आज्ञा लेनेको राजमहलमें आये। माता-पिता और पुत्रके बीच बहुत देरतक वार्तालाप होनेपर विवश हो राजा रानी ने पुत्रको दीक्षित होनेकी आज्ञा दे दी। एवन्तकुमार आज्ञा लेकर शीघ्रातिशीघ्र भगवान महावीरकी शरणमें आये। प्रभुने उन्हें पात्र जानकर दीक्षित कर लिया।

एक दिन नवदीक्षित एवन्तकुमार शौचादिके लिए बाहर गये हुए थे। रास्तेमें बहुत वर्षा हुई और पानीकी धारें बह चली। वहां मुनिने मिट्टीकी एक पार बांधी। पारके पीछे बहुत पानी जमा हो गया। उसी गंदले पानीमें मुनि एवन्तकुमार अपना पात्र तिराने लगे। बाल मुनिकी यह क्रिया अन्य मुनियोंको बहुत बुरी लगी ऐसी बाल दीक्षाके कुपरिणामोंका प्रभुके सम्मुख वर्णन कर वे भगवानपर आक्षेप करने लगे। फिर सर्वज्ञ प्रभुने उन्हें बहुत ही शांत भावसे समझाया। वे बोले कि 'समय पालनमें और आत्मकल्याण करनेमें वयका आधार नहीं लिया जा सकता।' बाल मुनि की

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ओर संकेत कर प्रभुने कहा—'मुनियों ! अपने पात्रको इस गंदले पानीमें तिरानेका बालमुनिका यही उद्देश्य था कि वे अपनी आत्मा को भी इस गंदले संसार–सागरसे कठोर प्रयत्न करके तिराकर पार ले जावेंगे।' यह सुनकर अन्य मुनि तो अपना सा मुंह लेकर रह गये; और बालमुनिने प्रभुकी उस वाणीको अपनी क्रियामें उतारनेका निश्चय कर लिया तथा उसमें अपनी पूर्ण शक्ति लगा कर पार-गामी हो गये।

शालिभद्र और धनामुनि

वाराणसी के उस समयके राजा अलबको दीक्षा देते हुए तथा अपने सपोतदेश से भव्यजीवों को प्रतिबोधित करते हुए एक समय प्रभु महावीर पुनः राजगृहमें पधारे। इस समय उसी नगरमें एक कोट्याधीश शालिभद्र नामक सेठ रहता था। भगवान की शरणमें आकर अपने राजसी वैभवको ठुकराकर उसने दीक्षा ग्रहण की। ये शालिभद्रजी इतनी बड़ी सम्पतिके स्वामी कैसे बने, उसका एक दम त्याग उन्होंने कैसे कर दिया, उनकी पूर्व करणी कैसी थी इत्यादि बातोंका संक्षिप्त वर्णन शास्त्रानुसार इसप्रकार है।

राजगृहके समीप किसी समय शालि नाम की एक छोटी-सी बस्ती थी। उसमें धन्या नाम की एक गरीब स्त्री रहती थी। जब यह स्त्री उस गांवमें आकर बसी थी उस समय उसका केवल एक छोटा-सा पुत्रका ही उसकी सम्पतिरूप था। उसके पुत्र नाम संगम था। जब संगम थोड़ा बड़ा हुआ तो उसने गांवके ढोरों को चराने का काम लिया। आजीविका कोई दूसरा चारा न होनेके कारण धन्या को यही कमाई अंधेका लकड़ीके समान सहारा हुई।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

एक दिन किसी पर्वोत्सवके कारण गांवमें खीर पूड़ी वगैरः के पकवान घर-घर में बने। संगमने लोगोंसे इसका कारण पूछा और उसका भी दिल खीर खाने को ललचाया। वह उसी समय अपनी माताके पास आया और रोते हुए मांसे खीर मांगी। अपने दीन हीन बच्चे की ऐसी दशा देख और अपनी गरीबी पर पश्चाताप कर उसकी छाती भर आई। वह रोती हुई अपने प्रिय बालकका मुख चूमकर बोली 'बेटा! दुर्दिन की मारी हुई आज मेरे पास एक पैसा भी नहीं है।' परन्तु संगम भोला था वह तो खीर-खीर करके जोर-जोर से रोने लगा। तब तो पड़ोसियों को मां बेटे की दीन हीन दशा पर तरस आया और उन्होंने उस बच्चेके लिये खीर का सामान जुटा दिया। माताने खीर बनाकर बच्चेको परोस दिया और आप किसी दूसरे काममें लग गई। इतने में ही वहां आहार-पानीके लिये एक मुनिराजका आगमन हुआ। वे एक मास के उपवास धारी मुनि थे। आज ही उनके पारणे का दिन था। बालक ने ज्योंहि मुनि को देखा तो उसके मन में भी धनी लोगोंके समान मुनिको अहार कराने की इच्छा उत्पन्न हो गई। तुरन्त उसने मुनिमहाराजको बुलाया और अपनी थाली की आधी खीर लकीर पाड़कर मुनिजीको देने का निश्चय कर लिया। ज्योंही उसने अपनी थाली को आधी खीर मुनिके पात्रमें डालनेको थाली टेढ़ी की त्योंही सारी खीर उनके पात्रमें जा गिरी। तब बालक का मन और भी हर्षायमान हुआ। वह सोचने लगा कि लोग तो बुलाबुलाकर मुनिको भोजन कराते हैं तब भी वे नहीं लेते मगर आज मेरे भाग्य प्रबल है कि सारी खीर मुनि महाराजने गृहण कर ली। मुनिजी तो लेकर चले गये परन्तु संगम खाली थाली ही चाटता रहा। थोड़ी बाद संगम की माता आ गई। तब तो वह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सोचने लगी कि मेरा प्यारा पुत्र रोज ही इतना भूखा रहता होगा। वह मन ही मन अपने भाग्य को कोसने लगी।

इस प्रकार माताका दृष्टिदोष होते ही संयमके पेटमें शूलकी पीड़ा आरम्भ हो गयी परन्तु उसके सरल प्रणामोंमें किसी तरहकी बाधा नहीं पहुंची। पेटका दर्द इतना बढ़ गया कि पड़ोसियोंकी कोई भी औषधियां सफल न हुई और अन्तमें उसके मनमें उन्हीं मुनियोंके दर्शनकी शुभ भावना पैदा हुई और उसी दशामें वह अपनी माता धन्याको सदाके लिए पुत्रविहीन करके परलोक को सिधार गया।

अन्त समयके शुभ परिणामोंके कारण संगमकी आत्मा राजग्रही नगरके प्रसिद्ध गोभद्र सेठकी धर्मपत्नी भद्रा के उदर में आई। गोभद्र बहुत धनवान सेठ थे। उन्होंने भद्राकी सम्पूर्ण दोहद चाह प्रेमपूर्वक पूरी की। प्रसूतिका समय निकट आया और भद्रा ने शुभ घड़ीमें एक अतिही सुन्दर होनहार पुत्ररत्नको जन्म दिया। जिसका नाम शालिभद्र रखा गया।

गोभद्र सेठ बहुत ही धर्मपरायण थे। उनका चित्त सदा जिनेश्वर पूजनमें ही लगा रहता था। उनका व्यापार भी चारों ओर फैला हुआ था। इस कारण उन्होंने जगत् ख्याति प्राप्त कर ली थी। जब शालिभद्र बड़े हुए तब पिताने उनके विवाहकी सोची। गोभद्रकी ख्यातिके कारण प्रत्येक व्यक्ति अपनी कन्याका विवाह शालिभद्रके साथ करनेकी इच्छा करने लगा। गोभद्रके पास अटूट धन था और पुत्र भी सुदृढ़ अवयवोंसे परिपूर्ण बलवान और बहत्तर कलाओंमें निपुण हो चुका था। इसलिए उसने एकसे एक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

रूप लावण्य कन्याओंके साथ एक एक करके शालिभद्रके बत्तीस विवाह किये। अब तो शालिभद्र भांति-भांति के सांसारिक सुख भोगने लगे। यहांतक कि उन्हें सूर्यके उदय और अस्त होनेतकका भान न रहा।

शालिभद्र तो इस तरह विषयोंमें आसक्त था और उस ओर सेठ गोभद्रने प्रभु दर्शनकी अभिलाषा प्रकट की। ज्योंही वे प्रभुदर्शन को गये और वहीं उन्हें वैराग्य हो आया और दीक्षा ग्रहण कर ली। दीक्षाके बाद शीघ्र ही उनके शरीरका निधन हो गया और वे स्वर्गस्थ हो गये।

स्वर्गस्थ गोभद्र मुनिकी आत्माने संसारी पुत्र शालिभद्रकी पूर्व जन्मकी मुनिको खीरदानकी पुन्याई अवधि ज्ञानसे देखी और उसपर मोहित हो गयी। तब तो उस आत्माने अपने पुत्रके भंडार अपने दिव्य प्रभावसे भरना आरम्भ कर दिया ताकि उसके सुख की सामग्री सदैव परिपूरित रहे। इधर अपने वैधव्य विषाद से दुखी होनेपर भी, अपने प्राणप्रिय पुत्रके सुखोपभोगमें किसी तरह की कमी न हो इस कारण शालिभद्रकी माता भद्रा भी गृहस्थी के सारे कामकाज सम्हालनेमें व्यग्र रहने लगी और शालिभद्र अपने दिन सांसारिक सुखमें बिताने लगे।

एक दिनकी बात है कि राजगृहीके राजा सम्राट श्रेणिक के दरबारमें कुछ व्यापारी लोग पहुंचे और राजाको अपनी रत्नकम्मलें दिखाई। मोल पूछनेपर व्यापारियोंने कहा कि राजन्! कम्मलोंका मोल सवा सवा लाख सोनैया (सोनेकी मोहर) है और उनका गुण यह है कि रत्नजड़ित होनेपर भी जब ये मैली हो जाती हैं

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तो अग्निमें धरनेसे ये साफ होती हैं। यहां विज्ञानवेत्ता लोग विचार करें कि उस समय भारतमें वस्तुओंके परस्पर विपरीत गुणों का समावेश कैसा किया जाता था। कम्मलोंकी कीमत सुन कर राजा अवाक हो गये और उन्हें लेनेसे इन्कार कर दिया। तब तो व्यापारी लोग उदास हो गये और शहरके बाहर पनघटपर डेरा डाल दिया।

सेठ शालिभद्रकी पनिहारिया पानी भरने को पनघट पर आई और परदेशी व्यापारियों को उदास देख उनसे पूछा, 'भाई तुम लोग कौन हो और क्या व्यापार करते हो। तुम्हारे पर इतनी उदासी क्यों है ?' तब तो उन पनिहारियों से उन्होंने आद्यन्त सब कहानी सुनाई। व्यापारियोंकी बात सुनकर पनिहारियोंने कहा 'भाई उदास होने की कोई बात नहीं है। इस नगरमें सेठ शालिभद्र की माता भद्रा बहुत धनाढ्य और दयालु हैं उनके पास चलिये। वे तुम्हारे सब कम्मल लेलेवेंगी।'

यह सुन व्यापारियोंके हृदयमें आशाके फूल फूले और वे उन पनिहारियोंके साथ भद्रा सेठानीके यहां आये। उन्होंने अपने कम्मल और उनके गुण सेठानीजीके सामने बतलाये। कम्मलोंके अद्वितीय गुण सुन माता भद्राने पूछा कि 'हे व्यापारिओ ! ऐसे कितने कम्मल आपके पास हैं।' व्यापारियोंने उत्तर दिया 'माताजी ! ऐसे कम्मल तो हमारे पास १६ हैं। माता भद्राने उनसे बत्तीस मांगी क्योंकि शालिभद्रकी तो बत्तीस स्त्रियां थी। परन्तु उन लोगोंके पास ३२ कम्मलें न होनेके कारण भद्राने उन सोलहों कम्मलोंको खरीद लिया और व्यापारियों को मुंह मांगा मोल चुकाकर बिदा किया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अब उन १६ कम्मलोंके ३२ टुकड़े कर माता भद्राने शालिभद्रकी एक-एक स्त्रीको एक-एक टुकड़ा ओढ़नेको भिजवा दिया। सासकी भेजी हुई वस्तुका अपमान न हो यह समझकर उन बहुओंने उन्हें एक रात्रिको तो ओढ़ा और दूसरे दिन सवेरे अंगमें चुभनेके कारण उन्हें बाहर फेंक दिया। सवेरे ज्योंही झाड़नेवाली झाड़नेको आई त्योंही उसकी दृष्टि इन कम्मलोंपर पड़ी, वह उन्हें बटोरकर घर ले गयी। और दूसरे दिन उनमेंका एक कम्मल ओढ कर राजा श्रेणिकके दरबारमें झाड़नेके लिए गई। इस कम्मलको झाड़नेवालीके अंगपर देख राजाको बहुत ही अचम्भा हुआ। वह वह मन ही मन सोचने लगा कि ओह! ओह! जिन कम्मलोंको मैं न खरीद सका उन्हें एक झाड़नेवालीने ले लिया। क्या मेरे राज्यमें मुझसे भी धनाढ्य लोग रहते हैं। इस झाड़नहारीको बुलाकर पूछना चाहिए। इतना विचार मनमें आते ही राजाने उसे बुलाया और पूछा कि यह कम्मल तूने कहां से पाई? उसने सब बात जैसी हुई थी कह सुनाई। उसकी बात सुन राजाकी इच्छा हुई कि मेरी नगरीमें इतना धनाढ्य सेठ रहता है उससे अवश्य मिलना चाहिये।

यह सोच राजा श्रेणिक अपने मंत्रियोंके साथ शालिभद्र के भवनकी ओर रवाना हुआ। सूचना पाकर सेठानी भद्रा राजाके स्वागतार्थ रवाना हुई। अपने द्वार पर राजा श्रेणिकको देख अपने और अपने पुत्र के भाग्यकी मन ही मन सराहना करने लगी। उसने पूर्ण सामर्थ्यके साथ राजाका स्वागत किया तत्पश्चात् उसने नम्रता पूर्वक राजाको भवनमें प्रवेश करनेके लिये संकेत किया। ज्योंही राजा श्रेणिकने पहले मंजिलमें प्रवेश किया तो उसकी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सजावट देख वह मन ही मन बहुत हर्षायमान हुआ; वह मंजिल चांदीका बना हुआ था। दूसरा मंजिल सोनेका था उसे मोतियोंसे जड़ा हुआ चमचमाता देख राजा मन ही मन संकुचित होता और सोचने लगता कि मेरे राज्यमें इतनी बड़ी विभूतिका स्वामी बसता है यह विभूति तो मेरे पास भी नहीं है यह पुरुष धन्य है और मैं भी धन्य हूं कि मेरे राज्यमें ऐसे भाग्यशाली पुरुषका निवास है।' इसप्रकार एकके बाद एक मंजिलको पार करता हुआ राजा श्रेणिक सेठानी भद्राके साथ चौथे मंजिल पर पहुंचा जो स्फटिकका बना हुआ था। इस मंजिल पर आते ही राजाको शंका हुई कि यह तो अथाह पानीसे भरा है इसकी परीक्षाके लिये राजा ने अपनी हीरेकी अंगूठी उसमें डाली, अंगूठीका आवाज तो हुआ मगर अंगूठी स्फटिक के तेजमें अदृश्य हो गई। तब राजा अंगूठी देखने के लिये चकाचौंधसा हो गया। फिर कर जब भद्राने पूछा महाराज! क्या हुआ तब राजा बोला कि 'मेरी हीरेकी अंगूठी यहां गिर गई है उसे देख रहा हूं।' तब तो भद्राने उत्तर दिया। महाराज! घबराइये न यहीं विराजिये अब आगे जाना तो और भी कठिन है शालिभद्र तो सातवें मंजिल पर रहता है।

राजाको वहीं बैठाकर पहले तो भद्राने एक छाब अंगूठियोंकी भरकर लाई और विनयपूर्वक राजाको निवेदन दिया कि 'महाराज! आपकी अंगूठी तो मिलना कठिन है मगर इस छालमें जो अंगूठी आपके मन भावे उसे ग्रहण कीजिये इतना कह वह शालिभद्रके पास गई और उसे कहा बेटा। अपने यहां नगरनाथराजा श्रेणिक पधारे हैं उनसे मिलने चलो। तब तब शालिभद्र बोला माता! क्या मेरे ऊपर भी कोई नाथ है? मैं तो अभी तक अपने को ही

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सर्वश्रेष्ठ मानता था। यह सोच मनमें उदासी आ गई और माता के वचन शिरोधार्य वह राजा श्रेणिकसे मिलने आया। राजाने उसे बड़े हर्षसे हृदयसे लगाया और उसका मुख चूम उसके भाग्य की भूरि-भूरि प्रसंशाकी। बहुत कुछ वार्तालाप होनेके पश्चात् राजा तो अपने महलोंकी ओर रवाना हो गया, पर शालिभद्र मन में चिन्तित हो सोचने लगा कि 'मैं दुर्भागी हूं कि इतनी सम्पति पाकर भी मेरे ऊपर नाथ रह गया अब तो ऐसी तपस्या करनी चाहिये जिससे सिर पर नाथ न रहे।' इसप्रकार मनमें वैराग्य भावना उत्पन्न होते ही वह अपनी एक एक स्त्रीको प्रति दिन तजने लगा।

इधर तो शालिभद्र अपनी एक-एक स्त्रीको तज रहे थे कि उधर उसी नगरमें उनके बहनोई सेठ धनभद्र रहते थे। एक दिन शालिभद्रकी बहिन सुभद्रा उन्हें शीतल जलसे स्नान करा रही थी कि उसे अपने भाईकी याद आ गई और उसके आंखसे आंसूकी गरम-गरम बूंदे धनभद्र सेठके कंधेपर गिरी। इस तरह धनभद्र ने सुभद्राकी ओर देखा कि ऐसे सुखकी घड़ीमें यह रुदन क्यों ? उसने उसका कारण पूछा, तब बोली 'पतिदेव ! मैं तो अपनी मैं तो अपनी सातों सहेलियोंके साथ आपके सहवासमें सुखका अतुलनीय अनुभव कर रही हूं परन्तु मेरा भाई शालिभद्र संसार सुखको तिलांजलि दे एक-एक स्त्रीका रोज त्याग कर रहा है वह तो वैराग्य भावनासे पूरित हो चुका है। तब तो धनभद्र हंसे और बोले कि जब तेरा भाई वैराग्यसे रंग गया है तो एकदम सबको क्यों नहीं छोड़ देता। इससे मालूम होता है कि वह कुछ कायरता से कार्य कर रहा है। इसपर सुभद्राने ताना मारा। प्राणप्रिय ! आप तो सुख के मदमें चूर हैं आप वैसा करो तो पता पड़े। इतना सुनते ही

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

धनभद्रने उन आठों स्त्रियोंको अपनी बहन कहकर उसी समय तज दिया और शालिभद्रकी ओर जा पहुंचे।

शालिभद्रके यहां पहुंचकर उससे कहा 'कायर ! जब वैराग्य का ही अन्तिम आश्रय हो चुका तो एक-एक स्त्री क्या छोड़ता है। मैं तो आज ही आठोंका परित्यागकर तुम्हारे पास आया हूं। चलो ! शुभकार्यमें देर क्यों ?' बहनोईके वचन सुन शालिभद्र भी उसी क्षण नीचे उतरे और दोनोंने भगवानकी शरणमें आकर दीक्षा ग्रहण कर ली। थोड़े दिन ही बाद धनभद्र तो मोक्ष सिधारे और शालिभद्र सर्वार्थ सिद्धिमें देव गति पाये।

ग्रहस्थ और विरोधी हिंसा

कौणिक और चेड़ा राजाका युद्ध

प्रभु महावीर स्थान-स्थानमें धर्मोपदेश देते हुए और श्रेणिकादि राजाओंकी रानियोंको दीक्षित करते हुए चम्पानगरीकी ओर पहुंचे। उन दिनों राजा कौणिक वहां राज्य करता था। उसकी माताका नाम काली था; प्रभुके आगमनका समाचार सुन उसने पूछा 'भगवन् ! मेरा लड़का कालीकुमार संग्राममें गया हुआ है उसका कोई समाचार मालुम नहीं हुआ इसलिए उसकी कुशलक्षेम जाननेकी मेरी तीव्र अभिलाषा है कृपाकर उसे कहिए।'

सर्वज्ञ भगवान बोले 'कि उसका तो शत्रुके ओरसे आये हुए एक ही बाणमें शरीरान्त हो गया' यह सुनकर काली माता मूर्छित हो गई। कुछ समयके बाद वह होशमें आयी और बोली भगवन्

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

राजा कौणिककी सम्मति लेकर मैं भी दीक्षा धारण करूंगी। उसने वैसा ही किया और उसके पीछे नौ रानियोंने भी दीक्षा ग्रहण की।

जिस संग्राममें काली कुमार मारे गये उसका संक्षिप्त वर्णन शास्त्रानुकूल इस प्रकार है कि बहुत समयतक राज्य करते हुए राजा श्रेणिकको उसके पुत्र कौणिकने राज्यके लोभके कारण पकड़कर कैदमें डाल दिया। कौणिकके दस भाई और भी थे, उनके पास आकर कौणिकने अपने नीच कार्यकी सारी हकीकत कही और उन्हें प्रलोभन दिया कि इस राज्यका स्वामी बनते ही मैं सारा राज्य अपने भाइयोंमें बराबर हिस्सोंमें बांट दूंगा और बादमें उसने अपना सारा राज्य ग्यारा हिस्सोंमें बांट दिया।

पिताको राजबन्दी बनाकर, आप राजा बनकर वह अपनी माताके पास उसका आशीर्वाद लेनेको आया। परन्तु पुत्रकी नीचतासे माताको बहुत दुख हुआ। उसने उस नीचको बहुत फटकारा और कहा—'बेटा! क्या इसी नीचताका नाम पितृ भक्ति है। इसी दिनके लिये तेरे दयालु पिताने तुझे पाल पोसकर बड़ा किया था। तुझे याद नहीं है पर सुन! जब तू मेरे गर्भमें आया तब ही से मेरी गर्भजात भावनाओंमें नीचता आने लगी थी और मैं यह जान गयी थी कि इस गर्भका बालक बहुत ही नीच प्रकृतिवाला होगा। इसीलिये तेरे पैदा होते ही मैंने, अपनी कूख लज्जित न हो, तुझे कचरेके घूड़ेमें डलवा दिया था। मगर तेरे दयालु पिता बिना किसीको मालूम हुए तुझे वहांसे उठा लाये और बड़े प्रेमसे तुझे पाला पोसा और इतना बड़ा किया। और आज तूने उन्हें कैदमें डलवा दिया और मेरा आशीर्वाद लेने आया है, तुझे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

लाख बार धिक्कार है। तू इसी समय जा अपने कृपालु पिताको बंधनोंसे मुक्त कर।'

माताके ऐसे मार्मिक वचन सुन कौणिकने अपनी तलवार उठाई और अपने पिताको मुक्त करनेके लिये चल दिया। पिताने ज्योंही उसे नंगी तलवार हाथमें लिये हुए आता देख त्योंही उनके मनमें शंका प्रतिशंकाएं उठने लगीं। वे सोचने लगे कि पहले तो इसने मुझे कैद खानेमें डलवाया और अब यह नीच मुझे जानसे वंचित किया चाहता है। ऐसा मनमें विचार कर वे सोचने लगे कि 'अत्याचार और अन्याय चाहे वह बड़े से हो या छोटे से, राजासे हो अथवा प्रजासे, ऊँचसे हो चाहे नीचसे, वह किसी भी हालतमें क्षमाके योग्य नहीं होना चाहिये। अन्याय और अत्याचार को सहन करने वाला या उनको सहयोग देने वाला अन्यायी और अत्याचारीसे भी बुरा और भयंकर होता है। वीर पुरुष के लिये पराधीनताका जीवन त्याज्य और असह्य है।' इतना विचार मनमें आते ही राजाने अपनी हीरेकी अंगूठीकी ओर देखा और अपने इष्ट का स्मरण कर उसे चूंस डाला। चूंसते ही राजा तो परलोक वासी हो गये और कौणिक पछताते रह गये। इसी रंजमें कौणिक ने अपनी राजधानी राजगृहीसे हटाकर चंपापुरीमें कायमकी और वहीं रहने लगा।

अबतो सम्पूर्ण राज्यका स्वामी राजा कौणिक हो गया और उसने अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार अपना सम्पूर्ण राज्य ग्यारह हिस्सों में बांट दिया राजा कौणिकका एक छोटा भाई और था उसका नाम वहलकुमार था और वह राजा कौणिकके ही पास रहता था। राजा श्रेणिकने एक सुन्दर हाथी तथा एक बहुमूल्य हार उसे दे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

रक्खा था जो कि राजा श्रेणिकके सम्पूर्ण राज्यकी अनुपम विभूति थे। जब राजा कौणिक राज्याधिकारी हुए तो उन्हें लोभने घेरा। उनकी इच्छा उस हाथी और हारको लेनेकी हुई। लोभ दुनियामें क्या नहीं कराता, यह तो आत्माका भयंकर रिपु है। क्योंकिः—

न पिशाचा न डाकिन्यो न भुजंगा न वृश्चिका :।
सम भ्रांत यनिर मनुजं यथा लोभो धियं रिपुः ॥

कौणिक राजाकी यह दुईच्छा जब बहलकुमार को मालूम हुई तब वह अपनी उक्त दोनों बहुमूल्य चीजोंको लेकर भाग निकला। भागकर वह अपने नाना वैशालीके राजा चेड़ाके यहां चला गया। राजा चेड़ा बहुत धर्मपरायण एवं जैनधर्मका कट्टर अनुयायी था। उसके आस पासके इतर राजागण भी जैनधर्मी थे। जब राजा कौणिक को बहल कुमारके चले जानेका पता लगा तब उसने राजा चेड़ाके पास दूत भेजे और कहा कि 'बहलकुमार हाथी और हार लेकर चला आया है उसे वापिस करो।' इसपर राजा चेड़ाने उत्तर दिया कि यदि तुम हाथी और हार लेना चाहते हो तो अन्य भाइयों के समान बहलकुमारको भी अपने राज्यका हिस्सा दो। अन्यथा वे चीजें तुम्हें नहीं मिल सकतीं। इस उत्तरको पाकर राजा कौणिक आपेसे बाहर हो गया। उसने तुरन्त लड़ाईकी तैयारी कर ली। इधर राजा चेड़ाने भी भविष्य विचारकर अपनी सेनाको तथा अपने सामन्त राजाओंको सहायतार्थ संग्रामके लिये तैयार हो जाने का संदेशा भेजा। ये राजागण सब जैनधर्मी थे। वे राजा चेड़ाके आदेशानुसार सब एकत्रित हुए और युद्धके कारणों पर उन्होंने विचार किया। शास्त्र और व्यवहार का विचारकर वे राजालोग चेड़ा से बोले 'राजन्! हम लोग जैन धर्मी हैं जिसका मूल तत्व

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

'अहिंसा' है। अहिंसा कायर और निर्बलों का धर्म नहीं है। वह तो चिरकालसे वीर पुरुषों का धर्म रहा हुआ है। हम लोग तो गृहस्थ हैं। गृहस्थी विरोधी हिंसाका त्यागी नहीं हो सकता। इस युद्धमें तो विरोधी हिंसाका सामना है। यदि कोई आततायी उपद्रवी अपने धन, राज्य या अपने शरणागतोंपर आक्रमण करे तो उसे हटाना कर्त्तव्य है। न्यायकी प्रतिष्ठा ही वास्तविक अहिंसाकी प्रतिष्ठा है। आंखोंकी प्रतिष्ठा है। आंखोंके सामने अन्याय होता देखकर जो मौन रहता है वह अहिंसाका भक्त नहीं है। अन्याय और अत्याचारोंको मिटाकर शांति फैलाना और दुःखियों के दुःख को दूर करना यह अहिंसाकी सच्ची प्रतिष्ठा है। इसी प्रतिष्ठा की रक्षा करना सच्चे जैनी एवं क्षत्रीका धर्म है' इत्यादि वचन कह वे बहल कुमारकी रक्षाके हेतु सम्पूर्ण युद्ध सामग्रीके साथ युद्धस्थलमें उतर पड़े।

उधर कौणिक भी अपनी सेना लेकर चेड़ा राजापर चढ़ आया। बस दोनों तरफसे युद्ध आरम्भ हो गया। धर्म युद्धके नाते रथीसे रथी और घुड़सवारसे घुड़सवार, पैदल सेनासे पैदल सेना भिड़ गयी। भयंकर युद्ध हुआ और इसी युद्धमें बाण द्वारा कालि कुमार मारे गये जैसा कि भगवानने रानी कालो माता को ऊपर दर्शाया है।

अभिप्राय यह है कि जैनियोंका अहिंसा धर्म यह कभी नहीं कहता कि अपनी जान, अपने माल, अपनी औरत, अपने धर्म अपने नातेदार अथवा अपने शरणागतोंपर आई हुई आपत्तियोंको दूर करनेके लिए 'अहिंसा' बाधा पहुंचाती है। अपितु 'अहिंसा धर्म' की आड़में कायर व डरपोक बनकर अन्यायों और अत्याचारों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को बढ़ने देना तो घोर हिंसाकी वृद्धि करना है जिसे जैन धर्ममें महान पापका हेतु माना है। कसाइयोंके आधीन होकर निरपराधी जीवोंका बिना कारण वध करना जैनियोंके लिये महान हिंसा एवं अधर्म है। परन्तु अपराधी शत्रु अथवा किसी आततायीको उचित दण्ड देकर दममें दम रहते जीवमात्रको शांति पहुंचाना और दुनिया को अभीत बनाना जैनियोंका परम धर्म है। अहिंसा वीरोंका सबल और अभेद्य शस्त्र है। इसी शस्त्रके द्वारा संसारमें अपूर्व शांति कायम रह सकती है जिसका प्रत्येक प्राणी अनुभव करता है। इसका तिरस्कार होते ही अशांति की प्रचण्ड ज्वाला भभक उठती है। इसीलिए विश्वशांतिके महान उपासक इस शताब्दिके राष्ट्रपिता महात्मा गांधीने भी इसी प्रबल शस्त्र 'अहिंसा' का सहारा लिया जो अनुकरणीय है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

गोशाला का पुनर्मिलन

और

पश्चाताप

भगवान महावीरके कथनानुसार तप करके गोशालाने 'तेजो लेश्या' प्राप्त करही ली थी और उसे 'अष्टांगनिमित' की सिद्धि भी प्राप्त हो चुकी थी जिसका वर्णन हम पहले कर आये हैं। इन्हीं दो शक्तियों द्वारा वह अपने 'आजिविक सिद्धान्त का प्रचार करता चला जा रहा था और अपने को चौबीसवां तीर्थंकर कहता था। तेजोलेश्या से तो वह अपने विरोधियों को भयभीत बनाया हुआ था और अष्टांगनिमित से वह भूत और भविष्यकी बातोंको बता देता था इसीसे बहुतसे लोग उसके अनुयायी बनते चले जाते थे क्योंकि 'चमत्कारको नमस्कार' वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी। जहां कहीं वह जाता वहां ही वह अपने को अरिहंत करता तथा उसकी प्रतिष्ठा भी उसी प्रकार होती थी।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इधर उधर घूमते-घूमते एक दिन प्रभु महावीर श्रावस्ती की ओर जा पधारे। वहां गोशाला भी आया हुआ था। उसके अष्टांग निमित्त ज्ञान की चर्चा चहुं ओर फैल रही थी। लोग भी धड़ा-धड़ उसके शिष्य बन रहे थे। प्रभुकी आज्ञासे गौचरी को आये हुए गौतमस्वामी ने सुना कि यहां कोई गोशाला आया हुआ है जो अपनेको सर्वज्ञ 'जिन' कहता है। वे तुरन्त प्रभुके पास लौटकर गये और उनसे पूछा भगवान्, क्या गोशाला सचमुच 'सर्वज्ञ जिन' है।' भगवान बोले, 'वह तो मंखली पुत्र अजिन है। बहुत दिन पहले वह मेरे द्वारा ही दीक्षित और शिक्षित हुआ है। परन्तु पूर्वकृत कर्मानुसार उसका स्वभाव ही वैसा है। अष्टांग निमितके योगसे उसकी प्रसिद्धि फैल रही है पर वह अरिहन्त नहीं है।' यह सुन गौतम स्वामी की शंका समाधान हो गई।

एक दिन गोशालाकी भेट आनन्द मुनिसे हो गई। उसने आनन्द मुनिको कहा 'मुनि! देखो तुम्हारे गुरु मुझे तो मंखली पुत्र कहते हैं और आप धर्माचार्य बनते हैं। तुम्हारे गुरुको दूसरे की निन्दामें धर्म दिखता है परन्तु उन्होंने मेरी तेजोलेश्याका प्रभाव नहीं देखा है जो उन्हें बातकी बातमें भस्म कर सकती है। अगर वे मुझसे शत्रुता करेंगे तो उन्हें और उनके अनुयायियों को उसका फल चखना पड़ेगा।' यह सुन आनन्द मुनि प्रभुके पास आये और प्रभुसे सब हाल कह सुनाया और पूछा 'भगवान् क्या उसकी तेजोलेश्या में इतनी शक्ति है कि वह सर्वज्ञोंको भी भस्म कर सकता है अथवा वह अपनी केवल बड़ाई ही मारता है?' इसपर प्रभुने उत्तर दिया कि 'अरिहन्तोंके सिवाय सचमुच उस लेश्या में इतनी शक्ति है कि वह चाहे जिसे भस्म करदे। अतः सब मुनियों से कह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दो कि गोशालाके साथ कोई भी व्यर्थ का वादाविवाद न करे। आनन्द मुनि ने वैसा ही किया।

इतने ही में गोशाला भी प्रभुके पास आ पहुंचा और कहने लगा-'ऐ काश्यप! यहां के लोगोंके सामने तुम मुझे मंखली पुत्र गोशाला कहते हो और अपना शिष्य कह कर मुझे पाखंडी बताते हो। मगर तुम्हारा शिष्य गोशाला अवश्य था। वह तो स्वर्गवासी हो चुका। जब उस सुन्दर शक्तिशाली शरीर को मैंने निर्जीव देखा तो मैंने अपनी शरीर तो तपके बलसे वहीं छोड़ दिया और उस मृतक गोशालाके शरीरमें प्रवेश कर गया। इसीसे तुम भ्रान्तिमें पड़े हो। मैं तो अरिहन्त मुनि हूं।'

तब भगवान बोले—'गोशाला! यों मिथ्या बोलकर क्यों तुम अपनी ही आत्माका हनन करते हो। मुझसे तुम्हारी कोई भी बात छिपी नहीं है।'

इसपर गोशाला बहुत ही क्रोधित हो गया और कहने लगा कि 'क्या तुम्हारी आ ही गई है। मुंह बन्द करो नहीं तो अभी मटियामेट कर डालूंगा।'

गोशाला की इस प्रकार धृष्टता देख प्रभुके दो मुनियोंको बहुत ही बुरा लगा। उन दोनोंने अपने गुरूका अपमान देख शिक्षा रूपेण उसे कुछ बोल बैठे। इसपर उसने तुरन्त अपनी तेजोलेश्या उन दोनों मुनियोंका ओर छोड़ी और बातकी बातमें वे आत्मध्यानी बनकर स्वर्ग सिधारे। इसपर तो गोशाला और भी गर्वित हो गया। अब तो उसके क्रोधका ठिकाना न रहा। वह तो भगवानपर ही अपने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वाक्‌बाणोंकी वर्षा करने लगा। इस बार भगवानने ही उसका उत्तर देना उचित समझा, वे बोले 'गोशाला ! अपने शिक्षा और दीक्षा गुरुसे ही ऐसा घृणित व्यवहार ? जिससे तूने शास्त्रों का ज्ञान पाया, तेजोलेश्याकी प्राप्ति की उसके प्रति ऐसा कठोर व्यवहार तुझे शोभता नहीं। यह तो तेरे ज्ञानकी निर्बलता है। क्रोध अज्ञानका लक्षण है। ज्ञान और तपकी शोभा विनय और शांतता है। अतः तू अब भी चेत।'

इतना सुनते ही उसके क्रोधका पारा और बढ़ गया। इस बार उसने भगवानके प्रति ही अपनी तेजोलेश्याका व्यवहार किया। परन्तु भगवानके घनघाति कर्म तो नाश ही हो चुके थे, उनपर इस लेश्याका क्या असर होनेवाला था। वह अब तो पूर्ण वेगसे गोशाला के तरफ ही लौटी और उसे भस्म करना आरम्भ कर दिया। गोशाला हिम्मतका पक्का हो चुका था। लेश्या छोड़नेके बाद वह प्रभुसे कहने लगा कि 'अब कैसे बचोगे, छै महीने बाद ही इस शाक्त द्वारा तुम्हारा निधन हो जावेगा।'

इसपर सर्वज्ञानी प्रभुने उत्तर दिया कि 'मेरी आत्मा तो इस समय अर्हन्तावस्था भोग रही है और वह ठीक सोलह वर्ष इसी अवस्थामें रहेगी परन्तु तेरा तो निधन आजसे सातवें दिन हो जावेगा। इसलिए तू अपने शुद्ध स्वरूपका स्मरण कर। अपनी कुत्सित भावनाओंका ध्यान तज दे जिससे तेरा अन्त सुधर जावे।'

तेजोलेश्याके उलट प्रभावसे पीड़ित होकर गोशाला मूक सा बन गया था। गौतमादि शिष्यगण उसे बार-बार प्रबोधित करते थे पर छै दिनतक उसपर कुछ भी प्रभाव न पड़ा। उसके जीवनका

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जब अन्तिम सातवां दिन आया तब उसके परिणामोंने पलटा खाया। उसके हृदयमें विवेक उत्पन्न हुआ। उसने उसी क्षण अपने चेलोंको एकत्रित किया और कहने लगा 'शिष्यो ! सचमुच इतने समयतक मैंने अपनी आत्माको और जगत्को धोखा दिया। मैं अभिमानवश अपने सर्वज्ञ गुरु भगवान महावीरके सत्सिद्धांतों के प्रतिकूल चला और दुनियाको भी गुमराह करता रहा। मैंने आज-तक अपने नामको भी छिपाया। मैं सचमुच मंखलिपुत्र गोशाला ही हूं। अज्ञानताके वशीभूत ही मैंने अपनेको 'जिन' और 'अरि-हन्त' कहलानेका थोथा स्वांग रचा। भगवान महावीर ही सच्चे सर्वज्ञ हैं। यदि अपना भला चाहते हो शीघ्रातिशीघ्र उनके शरण में जाकर उनका सत्धर्म अंगीकार करो, जिससे मेरी भी इच्छा पूरी होकर शांति मिले। यही मेरी अन्तिम अभिलाषा है।' शिष्यों ने अपने गुरुकी आज्ञा अक्षरशः पालन की और वे सबके सब भगवान महावीरके शिष्य बन गये। इस तरह पथभ्रष्ट गोशालाने भी अपने अन्तिम परिणामोंको सुधारकर सातवें दिन सद्गति प्राप्त कर ली।

वेदनीय कर्मके प्रभावसे भगवानकी छै माहसे तेजोलेश्याके कारण शरीरावस्था कुछ बिगड रही थी, सो भी सिंह अणगार मुनि द्वारा लाये हुए बिजौरेके पाक' को खानेसे स्वस्थ हो गई।

गौतमस्वामी और लब्धि प्रभाव

भगवान महावीर स्वमीके जीवन चरित्रमें गौतमस्वमी और उनके प्रश्न उत्तर एक विशेष स्थान रखते हैं। जबसे वेदान्तानुयायी इन्द्रभूति प्रभु महावीरके शिष्य हुए और उनका नाम गौतम पड़ा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तबसे स्थान-स्थानमें उनकी शंका और प्रभुके उत्तरका उल्लेख पाया जाता है। गौतमस्वामीने समय-समय पर अपनी शंकाओं का निराकरण भगवानसे कराया है। इन्हीं प्रश्नोंकी संख्या कल्पसूत्रमें छत्तीस हजार बताई हैं, जो आद्यन्त भगवती सूत्रमें एकचित वर्णन की गई हैं जिन्हें पढ़कर आधात्मिक जगत् अचंभेमें पड़ जाता है।

गोशालाके निधन हो जाने के पश्चात् गौतमस्वामीने भगवान से पूछा, 'प्रभु ! तेजोलेश्यासे वे दो मुनि और गोशाला मृत्यु पाकर कौन-कौन सी गतिको प्राप्त हुए हैं सो कहिये।'

प्रभुने उत्तर दिया कि गौतम ! 'पहले मुनि सर्वानुभूति तो आठवे स्वर्गमें देवरूप जाकर जन्मे हैं और दूसरे मुनि सुनक्षत्र अच्युत नामक देवलोकमें देव हुए हैं। गोशाले का जीव भी अन्त समय सुपरिणामोंके योग्यसे अच्युत स्वर्गमें गया है। अन्तमें वे सब मानव भव प्राप्त कर अपने सम्पूर्ण कर्मोंका क्षय करके मुक्ति पावेंगे।'

गौतमस्वामी प्रभुद्वारा दीक्षित होने पर प्रभुके प्रथम गणधर हुए। ये चार ज्ञानधारी मुनि चौदह पूर्वधारी विद्यानिधान जिन-जिनको प्रतिबोध करके दीक्षा देते वे सब केवल ज्ञान प्राप्त कर लेते थे परन्तु भगवानके ऊपर मोहनी कर्मके वशमें स्नेह होने के कारण खुदको केवल ज्ञान प्राप्त नहीं होता था।

एक समय (गौतमस्वामीने) भगवानकी देशनामें ऐसा सुना कि आत्मलब्धि द्वारा जो अष्टापद तीर्थकी यात्रा करे सो उसी भव में मोक्ष पावे। अष्टापद बत्तीस कोस लंबा ऊंचा पर्वत है। वहां

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पैदल तो कोई चढ़ ही नहीं सकता, परन्तु लब्धिके योगसे उस पर चढ़ सकते हैं। गौतमस्वामी अपनी परीक्षा करनेके लिये प्रभुकी आज्ञा लेकर उस ओर रवाना हुए और अपनी लब्धि द्वारा सूर्यकी किरणों का अवलंबनकर उस पर्वत पर चढ़ने लगे जिसके आठ पगथिये थे। जब पहले पगथिये पर पहुंचे तो देखा कि पांचसौ एक तपस्वी कोडिएण तापस प्रमुख एकान्तर उपवासकी तपस्या कर रहे हैं। दूसरे पगथिये पर दिन्न नामके तपस्वी पांच सौ शिष्य सहित दो उपवासके बाद पारणा करने की तपस्या करते दीख पड़े और तीसरे पगथिये पर शैवालि नाम तपस्वीके पांच सौ शिष्य तीन दिन के उपवास के बाद पारणा करने की तपस्यामें जुटे दिखाई दिये। मगर उसके आगे चढने को कोई समर्थ नहीं था। गौतम स्वामी को देख इन तपस्वियोंके मनमें चिन्ता हुई कि तपसे हम लोग कृश हो चुके तो भी इस पर्वत पर न चढ़ सके तब तो यह स्थूल शरीर वाला कैसे चढ़ेगा ? परन्तु गौतमस्वामी को अपनी लब्धि द्वारा देर भी न लगी और अष्टापद पर चढ़ गये। वहां भरत चक्रवर्ती द्वारा कराये हुए उन्होंने चौबीस तीर्थंकरों के बिम्ब श्रीजिन प्रतिमा को नमस्कार करके तीर्थ एवं उपवास किया। रात्रि विश्राम वहीं किया और वहीं श्री वज्रस्वामी के जीव जृंभक देवको प्रतिबोध किया। प्रातःकाल होते ही देव दर्शन कर जब उतरने लगे तो वे पंद्रहसौ तीन तापस गौतमस्वामी का महात्म्य देख उनके शिष्य हो गये। दीक्षा देने के बाद जब गौतमस्वामीने उनसे पूछा, भो तपस्विओ ! आज तुमको किस अहार से पारणा करावें, तब उत्तरमें उन्होंने खीर मांगी। गौतमस्वामीने 'अक्षीण महानसी लब्धि' द्वारा एक ही पात्रसे उन सबको पारणा कराया। उस समय तेलेके उपवास वाले पांचसौ एक तपस्वियोंको गुरुका महात्म्य विचारते-विचारते ही

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

केवल ज्ञान हो गया। इसी तरह भगवानका समवसरण देखते ही बेलेकी तपस्यावाले मुनियोंको और भगवानकी वाणी सुन एकान्तर उपवास वालोंको केवल ज्ञानकी प्राप्ति हो गई। इसप्रकार पन्द्रह सौ तीन मुनि भगवानके समवसरण आये और तीन प्रदक्षिणा देकर केवलियोंकी परिषदामें चले गये। गौतमस्वामी ने भगवानकी वन्दनाकी और नवदीक्षित उन पन्द्रहसौ तीन तपस्वियों को प्रभुकी वन्दना करने को बुलाया। तब भगवान बोले, हे गौतम ! केवलियों की अशातना मत कर। इस पर गौतमस्वामी बोले, स्वामिन् ! ये नये दीक्षित तो केवली हो गये पर मुझे केवलज्ञान क्यों नहीं होता ? प्रभुने उत्तर दिया, गौतम ! तू मेरे पर स्नेह छोड़ दे तो तुझे भी केवल ज्ञान हो जावेगा। इसपर गौतमस्वामी बोले, भगवन् ! मुझे केवल ज्ञानसे कोई मतलब नहीं। मेरी अभिलाषा तो यही है कि आप पर मेरा स्नेह बना रहे।'

ऐसे गुरु भक्त गौतमस्वामीने ऐवन्त कुमारादि अनेक जीवोंको प्रतिबोधित किया जो अन्तमें केवलज्ञानी बन शिवगतिके वासी हुए। गौतम स्वामीका चरित्र भी बाचने और मनन करने योग्य है परन्तु जैन शास्त्रोंमें इनके चरित्रकी छटा बहुत विरलतासे पायी जाती है जिसका संगठित चरित्र बनना परम आवश्यक एवं हितकर प्रतीत होता है।

अन्तिम देशना और परिणाम

छद्मस्त अवस्थामें बारह वर्षतक प्रभु महावीरने अपने चरित्र से किस धीरता और वीरताके साथ मौन रहकर अखण्ड शांतिका पाठ पढ़ाया सो तो पाठकोंको तो भली भांति मालूम ही हो गया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

केवल ज्ञान प्राप्तकर प्रभुने अपने निर्वाणतक हिंसाको दूर भगाकर अनेक राजा महाराजाओंको अहिंसाकी सुन्दर छायामें किस प्रकार प्रवेश कराया सो भी पाठकोंसे अब छिपा नहीं है।

इस भरतखण्डमें अहिंसाका सतत् उपदेश देते हुए, भिन्न-भिन्न स्थानोंमें आर्द्रकपुरके राजकुमार, दशार्णपुर के दशारणभद्र राजा इत्यादिको दीक्षित करते हुए बयालीसवीं अन्तिम चतुरमासी के समय प्रभु महावीर पावापुरीमें हस्तिपाल राजाकी जीर्ण राज-सभा दाणमंडिमें आकर विराजे। इस समय भगवानके इन्द्रभूति प्रमुख १४ हजार साधु, ३६ हजार साध्वियां, बारह व्रतधारी, एक लाख उनसठ हजार श्राविकाएं थीं। इनमेंसे ३१४ पूर्वधारी 'जिन' के समान अक्षरोंकी योजनाओंको जाननेवाले, १३०० अवधज्ञानी, ५०० मन पर्य्यवज्ञानी, सात सौ केवली, सात सौ विक्रयलब्धि धारक साधु, सात सौ अनुत्तर विमान स्वर्गमें जानेवाली और चार सौ विद्वानवादी थे जिनके साथ इन्द्रादि देव भी वाद करने में असमर्थ थे। इनके अतिरिक्त लाखों नर नारी ऐसे थे कि जिन्होंने भगवानके धार्मिक सिद्धांतोंको अन्तःकरणसे अपनाकर अपने दैनिक व्यवहारमें उतार लिया था। प्रभुके स्वहस्त दीक्षित सातसौ साधु और चौदह सौ साध्वियां मोक्ष गये। ग्यारह गणधरोंमेंसे इन्द्रभूति (गौतम) और सुधर्मा स्वामीको छोड़कर शेष नौ गणधर इस समयतक मोक्ष सिधार चुके थे।

जब भगवान अपना अन्तिम उपदेश देनेके लिये पधारे तब वहां इन्द्र काशी देशका स्वामी मल्लकी गोत्रीय नव राजा तथा कोशल देशके लेछकीय नव राजा इस प्रकार अनेक छोटे बड़े राजा महाराजा एकत्रित हुए और भगवानकी अमृतवाणी सुन उन्होंने अपना जीवन सफल किया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इस उपदेशमें प्रभुने भव्य जीवोंके उपकारार्थ चार पुरुषार्थ अर्थात्—धर्म अर्थ, काम और मोक्षका दिव्य संदेश संसार के कल्याणार्थ सुनाया। जिसमें अर्थ और काम ये पुरुषार्थ तो मनुष्य सरलतासे बचपनसे ही कुछ न कुछ साध लेता है। परन्तु धर्म और मोक्ष ये पुरुषार्थोंका कार्य कारण सम्बन्ध होनेसे कुछ कठिनाई जाती है। धर्म मोक्षका कारण है। जो धर्म जीवात्मा को मोक्षतक नहीं ले जाता वह धर्म ही धर्म नहीं कहला सकता। अस्तु।

प्रभु महावीरने अपनी अन्तिम देशनामें धर्म पुरुषार्थके दस लक्षण वर्णन किये हैं वे उस प्रकार हैं—(१) उत्तम क्षमा (२) उत्तम मार्दव अर्थात् मृदुता (३) उत्तम आर्जव अर्थात सरलता, निष्कपटता (४) शौच अर्थात् आत्माकी अन्तर्शुद्धि और बहिर्शुद्धि दोनों (वहां किसी-किसी शास्त्रोंमें लाघवे अर्थात् लघुता याने निर्मोहतों को बताया है), (५) सत्य अर्थात सच्चाई (६) संयम अर्थात इन्द्रियोंको वशमें करना (७) तप अर्थात उपवास नियम योगाभ्यास इत्यादि (८) त्याग अर्थात् बाहरी वस्तुओं से मनको हटाकर आत्मज्ञानमें तत्पर होना (९) आंकञ्चन अर्थात् निर्लोभता, निर्व्याजता याने परिग्रह रहित होना (१०) ब्रह्मचर्य अर्थात् शील धर्म सेवन करना। इन दसों अंगका सीधा साधा निकटतम संबंध आत्मासे है। और इन्हीं के सहारे यह आत्मा अपने निज स्वभावमें आकर परमात्मपद अर्थात् मोक्षको प्राप्त कर लेता है। और भव सागरकी कंटकीर्ण उलझनों से सदाके लिये छुटकारा पाजाता है।

तत्पश्चात् गौतमस्वामी ने प्रभुसे अवसर्पणी कालके पांचवे और छट्ठे आरेका वर्णन पूछा। प्रभुने उसका भी उत्तर अद्योपान्त वर्णन किया। इसके बाद प्रभुने गौतमस्वामी को देवशर्मा ब्राह्मण

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को प्रतिबोध करने के लिये एक पासकी बस्तीमें भेजा। प्रभु आज्ञा को धारण कर वे देवशर्मा ब्राह्मणको प्रतिबोधित करनेके लिये चले गये और रात्रिको वहीं ठहर गये।

यह रात्रि कार्तिक कृष्ण अमावशकी थी। उसी रात्रिमें भगवानने अपनी श्रीमुखसे सुख विपाक और दुःख विपाकके पचपन-पचपन अध्यायों का प्रतिपादन किया। इसके अतिरिक्त छत्तीस अपृष्ट व्याकरण का प्ररूपण भी बिना प्रश्नके ही किया। जब इस प्रकार अखंड देशना उस रात्रिमें प्रभु कररहे थे कि इन्द्रका सिंहासन डगमगाया। वह तुरन्त समझ गया कि भगवान का निर्वाण काल निकट आ पहुंचा। बस फिर तो वह शीघ्रातिशीघ्र अपने परिवार सहित प्रभुकी सेवामें आकर उपस्थित हुआ। वन्दना नमस्कार कर प्रभुसे विन्ती करने लगा कि 'हे भगवन! आपकी राशि पर दो हजार वर्षका भस्मगृह आया है उसके आनेसे संसार में आपत्तियोंकी भरमार हो जावेगी। साधु साध्वियोंका मान न रहेगा। धर्ममें रुचि हट जावेगी इसलिए आप अपनी आयु दो घड़ीके लिये बढ़ा लीजिए जिससे वह ग्रह आपकी उपस्थितिमें आ जावे तो आपके तपके योगसे वह बिलकुल निस्तेज होकर अनर्थ न करेगा।'

इसपर प्रभुने कहा—'शकेन्द्र! यह तुम्हारा मोह मात्र है! आयु तो कर्माधीन है। अनन्त बलवीर्यवाला भी उसे न घटा सकता और न तिलभर बढ़ा सकता, और न कभी ऐसा हुआ है न कभी होगा ही। भवितव्यता तो प्रबल है। जो होनेवाला है वह होकर ही रहेगा। जब यह भस्मगृह उतरेगा, उसके बाद पुनः साधु साध्वियोंका उदय पूजा सत्कार होगा और अहिंसा धर्मका झंडा फहरायेगा।' कदाचित उक्त वाक्यका संकेत इसी कालसे हो जब

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कि सम्पूर्ण भारतमें महात्मा गांधीके नेतृत्वमें अहिंसाके बलपर ही राजनैतिक वातावरण प्रकाश पा रहा है।

इस प्रकार शकेन्द्रको समझाकर प्रभुने पहले स्थूल मन वचन के योगोंको रोक लिया फिर कायाके योगमें स्थिर हुए। पश्चात मन वचन और कायाके सूक्ष्म व्यापारोंको अपने वश किया और शुक्ल ध्यानकी चौथी अवस्थामें अपने अवशेष कर्म बंधनोंसे बिलकुल रहित हो कार्तिक बदी अमावस्याकी रात्रिके पिछले प्रहरमें निर्वाण पद, जिससे श्रेष्ठतम दूसरा कोई भी नहीं है प्राप्त किया।

जब भगवान महावीरका निर्वाण कल्याणक हुआ तो नौ लेछकीय और नौ मल्लिकी राजाओंने तथा देवी देवताओंने बड़ी धूमधामसे भगवानका निर्वाणोत्सव मनाया। आत्मज्ञानका करानेवाला भावरूपी प्रकाश तो अब रहा नहीं, इसलिये रत्नादिक द्रव्य पदार्थों द्वारा ही इस भूमण्डलको प्रकाशमान किया गया। बस इसी दिनसे दीपावली उत्सव मनानेकी प्रथा चल पड़ी जो हर साल यथावत भारतवर्षमें धूमधामसे मनायी जाती है। यह दीपावाली (दिवाली) उत्सव भगवान महावीरके ज्ञान रूपी प्रकाशका द्योतक है जो आजकल रत्नादिकोंके अभावमें दीपकों द्वारा मनाया जाता है। इसके पहले दिवाली त्यौहारका उल्लेख भारतके किसी भी धर्मशास्त्रोंमें नहीं मिलता। पश्चात धर्मावलम्बियों ने इसी त्यौहारको अपने शास्त्रोंमें यथावत समयानुकूल अपना लिया।

भगवान महावीरके कार्तिक बदी १५ की रात्रिको निर्वाणपद प्राप्त हो जानेके बाद दूसरे दिन कार्तिक सुदी २ को भगवान की बहिन सुदर्शनाने अपने भाई राजा नन्दिवर्धनको भोजन कराके शोक दूर कराया। उसी दिनसे लोकमें भाई दूज पर्व चालू हुआ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

गौतमस्वामीको केवल ज्ञान

प्रभुकी आज्ञा लेकर गौतमस्वामी तो देवशर्मा ब्राह्मण को प्रतिबोध करनेके लिए गए हुए थे और जब उसे प्रतिबोध करके वापस लौट रहे थे, तब उन्होंने अचम्भेके साथ इस भूमण्डलको रत्नोंसे प्रकाशमान होते हुए देखा। परन्तु उनका अन्तःकरण कांच के समान बिलकुल उज्ज्वल था। भगवानके निर्वाणकी घटनाका प्रतिबिम्ब उनके अन्तःकरणपर राह चलते-चलते पड़ने लगा। लोगों द्वारा सुननेके बाद तो उनके मनपर ऐसा विचित्र प्रभाव पड़ा कि (भगवानपर अत्यधिक स्नेह होनेके कारण) वे संसारमें साहस हीन हो गये। उनका हृदय शोक और संतापसे भर गया। उनके हृदयमें नान प्रकारके भाव तरंगोंकी धूम मच गई। वे दुखी होकर मन ही मन कहने लगे 'हे भगवन्! मैंने तो गुरु, देव, कुटुम्बी एवं अपना सर्वेसर्वा आप ही को समझ रखा था। ऐसे समयमें तो कुटुम्बी जन सब पास बुला लिये जाते हैं यह लोकव्यवहार है; परन्तु प्रभु! आपने तो मुझे उलटा अपने पाससे हटा दिया अर्थात् लोक व्यवहार तकको नहीं पाला। हे प्रभु! आपको निर्वाण हीमें पधारना था तो मेरे सम्मुख भी वैसा कर सकते थे मैं तो उसमें बाधा पहुंचा ही नहीं सकता था। फिर ऐसी कृपा क्यों न की। हाय! यह संसार असार है यहां कोई भी किसीका चिरस्थायी रूप बनकर नहीं रह सकता। सब हीको अपने-अपने मार्गसे जाना होगा।'

इस प्रकार भांति-भांतिकी भावना उनके मनमें आते ही प्रभु के प्रति उनकी जो ममता थी वह छिन्न-भिन्न हो गयी और उन्हें केवल ज्ञान उत्पन्न हो गया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

केवल ज्ञान उत्पन्न होनेके बाद गौतम स्वामी पूरे बारह वर्षतक इस संसारमें विचरते रहे। स्थान-स्थानमें फिरकर भव जीवोंको प्रतिबोधित किया। अहिंसाका व्यापक रूप इन्हींके समयमें भारत-व्याप्त हो गया था। संसार भरमें शान्ति फैल गई। पूर्ण बारह वर्ष तक प्रचार-कार्य करके प्रभु गौतम स्वामी भी मोक्ष पदको प्राप्त हो गये।

इसके पश्चात् भगवान महावीर स्वामीके पांचवे गणधर श्री सुधर्मास्वामीने इस धर्मकी अहिंसाका प्रचार कार्य अपने सिर लिया। पूर्व आर्यावर्तमें इन्होंने भगवानका सत्संदेश जनताके कानों तक पहुंचाया। प्रत्येक धर्मावलम्बियोंने अहिंसातत्वको ही धर्मका मूल स्वीकार किया। सुधर्मास्वामीने भी अपने अनुयायियों की संख्यामें आशातीत वृद्धि की। फिर अपने शिष्य जम्बू स्वामी पर धर्म प्रचार का सारा भार सौंपकर आप निर्वाण पदको प्राप्त हुए। जम्बू स्वामी ही अन्तिम केवली हुए। उन्होंने भी अहिंसा का बहुत प्रचार किया। इन्हींके समयमें शास्त्रोंकी पुनः रचना हुई और जैनियोंकी संख्यामें करोड़ोंकी आवृद्धि हुई। यहां तक कि जैनियोंके मूल तत्व भारत व्याप हो गये।

जैसा लोक मान्य पं. बालगंगाधर तिलकने दर्शाया है कि बस इतिहासका यही समय है जबसे वैदिकादि धर्मों में से हिंसा सदा के लिये विदा पा चुकी; और जैनधर्म की अहिंसा का उज्जवल प्रकाश भारतके प्रत्येक धर्म में व्याप्त होकर चमकने लगा।

॥ सिरसा वन्दे महावीरम् ॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्री महावीर-स्तव

रचयिता

श्री अगरचन्द्रजी नाहटा—बीकानेर

१

सिद्धारथ-कुल कमल दिवाकर, त्रिशला-कुक्षि-मानस-हंस।
चरम जिनेश्वर महावीर हैं, मंगलमय त्रिभुवन अवतंस॥
यद्यपि उनमें अनुपम गुण गण हैं अनन्त नहीं कोई पार।
पा सकता है, किन्तु भक्तिवश करता हूं मैं वही विचार॥

२

आत्मामें तन्मयता जिनकी थी अतीव उन्नत अविचल।
परभावों की त्याग-भावना थी वैसी ही उग्र विमल॥
विश्व प्रेम भी ओत-प्रोत था जिनके जीवन में पूरा।
अद्वितीय हो सहनशील घन दूषण-गण जिनने चूरा॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

३

अहो अहो समता थी कैसी सहे कष्ट मरणान्त अनेक।
अगर और कोई होता तो, निश्चय खो देता सुविवेक॥
पर जिनको था ज्ञान गर्भ से देहादिक अरु आतम का।
विचलित वे कैसे होवें जो पद धरते परमातम का॥

४

नाम-मात्र के वीर नहीं थे विजय किये थे विकृत भाव।
कर्म-शत्रु जीते, जिनका था इन्द्रादिक पर अमिट प्रभाव॥
जीवोंके कल्याण-हेतु ही चैत्र शुक्ल तेरस शुभ दिन।
जन्म हुआ था सब को सुखकर आज वही दिन पावन धन॥

५

यज्ञों में पशु हिंसा होती थी मानों उनमें नहीं प्राण।
किया निवारण बता वीर ने जीव सभी हैं एक समान॥
माना था बस क्रिया काण्ड में लोगों ने सर्वरच तभी।
कहा वीर ने ज्ञान विना की क्रिया अफल हैं सदा सभी॥

६

उच्च नीचता तब लोगों में जाति पर ही निर्भर थी।
स्त्री जाति की दशा देश में पूर्ण रूप से बदतर थी॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रकट किया तब महावीर ने उच्च नीचता गुण संबंध।
स्त्री जाति आदर्श बने ज्यों वैसे प्रभु ने किये प्रबंध॥

७

वस्तु सुभावे धर्म सुलक्षण अतः साध्य सबको निजभाव।
साधन बहु विध हैं मत झगड़ो पाकरके यह उत्तम दाव॥
कर्म विकार निजातम गुण से पूर्णरूप से करदो दूर।
वीर प्रभु का भव्य बोध यह प्रगटाता है अद्भुत नूर॥

८

है अनन्त-धर्मात्मक सच्चा वस्तु मात्र का शुद्ध स्वरूप।
अनेकान्त से उसको देखो तब निश्चय होगा अनुरूप॥
यह सिद्धान्त उदार वीर का 'स्याद वाद' कहलाता है।
सर्व दर्शनों में सर्वोपरि विजय-परमपद पाता है॥

९

मानव जीवन ही जिनका है उपकारी उपदेश विशेष।
स्मरण-स्तव सुखदायक जिनका है यातें मैं करूं हमेश॥
अमर पूर्ण विकशित सद्गुण-पुष्पों की विशद विजय वरमाल।
वीर प्रभु को सादर सविनय करूं समर्पण मैं समकाल॥

॥ इति ॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पुस्तक मिलने का पता:—

१ श्री गुलाबचन्द वैद्यमुथा
I. T. P. & S. T. A.
छिंदवाड़ा म. प्र.

२ श्री शिखरचन्द सिद्धराज वैद्यमुथा
क्लाथ किराना मर्चेंट्स
छिंदवाड़ा म. प्र.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com